सचित्र पौराणिक नाटक

लेखक—

नाट्य ग्रन्थमाला संख्या ४

सचित्र पौराणिक नाटक

लेखक—

बलदेवप्रसाद खरे

सत्याग्रही प्रहलाद सम्राट परिक्षित परोपकार राजा शिवि बभ्रुवाहन और चन्द्रहास आदि नाटकोंके रचयिता।

प्रकाशक—

निहालचन्द एण्ड कम्पनी
७ नारायण प्रसाद बाबू लेन, कलकत्ता

प्रथम संस्करण १००० | सम्वत् १९७६ | मूल्य सादी १) , रेशमी १॥)

प्रकाशक—

निहालचन्द वर्म्मा,

नं० १, नारायणप्रसाद बाबू लेन,

कलकत्ता।

मुद्रक—दयाराम बेरी

“श्रीकृष्ण प्रेस”

२०/२१, बड़तल्ला स्ट्रीट, कलकत्ता।

प्रेमोपहार

पार हो गये। इस घोर कलिकालमें भगवान् सत्यनारायणकी कथा श्रद्धा और भक्तिसे सुननेसे परमाराध्य भगवान् भक्तवत्सल दीनबन्धुके पाद पद्ममें स्थान मिलता है। इसमें भक्ति और उसके महात्म्यका भी विशेष वर्णन है।

नाटकमें कहीं भी तोड़ मरोड़से काम नहीं लिया गया जैसा आजकलके बहुतसे नाटककार करते हैं। इससे अर्थका अनर्थ हो जाता है। ऐतिहासिक और पौराणिक नाटकोंमें इस तरहका हेर फेर करनेका किसी लेखकको कोई अधिकार नहीं है। खरेजीने इस बातका इसमें पूरा पूरा ध्यान रक्खा है कि सत्यनारायणकी कथाकी जगह कहीं मानुषलीलाका खिलवाड़ न बन जाय। खरेजी इसमें सफल भी हुए हैं। नाटकके गायन प्रायः सभी अच्छे और रङ्गमञ्चके योग्य हुए हैं। उनमें कुछ स्वरोंकी स्वाभाविकतासी भरी है। अच्छे पात्रों द्वारा नाटक अभिनीत होनेपर भगवान्‌के नाम माहात्म्यका दर्शकोंके हृदयपर बहुत कुछ प्रभाव स्थापित हो सकेगा। और यथेष्ट मनोरञ्जन भी हो जायेगा।

कथाओंका युग बीत गया। पहले गांव गांवमें कथायें होती थीं। अतएव लोग भी कम परिश्रम पाकर ज्ञान सम्पादन कर सकते थे। उससे हिन्दू जातिका बड़ा लाभ होता था। पर समयके हेर फेरसे वह प्रथा उत्तरोत्तर निम्न हो रही है। चमक दमकके प्रेमी जिन लोगोंको श्रीसत्यनारायणकी कथा सुननेका कभी सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ वे भी इस नाटककी भारत प्रसिद्ध इस कथाके महत्वको नाटकके रूपमें देख और सुन सकेंगे।

नाटकमें जो कौमिक (प्रहसन) दिखाया गया है इसीके लिहाजसे वह बुरा नहीं हुआ है उसे देखकर लोग हंसी हंसेंगे और कहीं शेम शेमके नारे लगायेंगे, परन्तु वह अस्वाभाविक और असम्भाविक हुआ है। अभी ब्राह्मण जातिकी इतनी अवनति नहीं हुई ऐसे पापाचारी स्वयं कथा वाचकों को भी बहुतायत नहीं है ऐसी दशामें इस नाटकसे जहां श्रद्धा और भक्ति उत्पन्न होगी वहां कथा वाचक लम्पट पण्डितकी पाप कथाका पापपूर्ण दृश्य देखकर भारतको चिर प्रचलित कथाकी प्रथासे घृणा भी उत्पन्न हो सकती है। अच्छा होता नाटकके लेखक खत्रीजी अपने समाजमें प्रचलित अनेक कुरीतियोंमें से किसी एक पर कलम चलाते!

ब्राह्मण हिन्दू जातिके गुरु हैं। आज भी हिन्दुओंके शोक और हर्षका कोई कार्य बिना उनकी उपस्थितिके सम्पादित नहीं होता। ब्राह्मणोंके पतनके साथ साथ समस्त—हिन्दू जाति का पतन सर्वथा अवश्यम्भावी है। यह सत्य है कि ब्राह्मणोंमें आज तेज तप ज्ञान त्याग और तपस्याके भाव नहीं रहे। आज हजारों ब्राह्मण ब्राह्मणत्वके नामकी दुहाई देते हुए दर दर ठोकरें खाते फिरते हैं। यजमान वृत्तिके नामपर बहुतसे अपनी बहू बेटियों की इज्जत भी नहीं रख सकते। कितनेही नीच स्वभाव यजमान कुछ पुरोहित ब्राह्मणोंकी कन्याओंसे अपनी स्त्रियोंके हाथों और पावोंमें मेंहदी लगवाने से कुछ भी धर्मकी हानि नहीं समझते कितनेही पापाचारी कुछ पुरोहितोंकी नौजवान लड़कियों और

बहुओंसे पापाचार करके पापमें पड़नेकी तैयारी कर रहे हैं। यह मन हँसीकी बातें नहीं हैं। इस दुर्दशाको देखकर हमें रोना चाहिये। इन पापोंका प्रायश्चित शास्त्रों तकमें नहीं है। परन्तु इसको कौन परवाह करता है। पर देखियेगा यदि यह पापाचार बन्द न हुआ तो एक दिन हिन्दू जातिका पता भी न लगेगा। उसकी मर्यादा और सभ्यता सब नष्ट हो जायगी। जो वास्तविक धर्म है उस पर हमारा न श्रद्धा है न भक्ति। केवल लोक दिखाऊ बातों और पाखंड आडम्बरोंका नाम धर्म हो रहा है। लेकिन यह पापमय धर्म हमारा बेड़ा गर्क करेगा, अगर हमने अपना कदम पीछे न हटाया।

खरेजीमें नाटक लिखनेकी योग्यता है और उत्तरोत्तर वह बढ़ रही है। इसमें सन्देह नहीं कि, इसी तरह उद्योग करनेपर खरेजी एक दिन नामी नाटककार हो सकेंगे हिन्दीका भी उससे बहुत कुछ उपकार होगा और खरेजी भी उसका यथेष्ट फल प्राप्त करेंगे। भगवान् करे खरेजीकी लेखनी द्वारा लिखे नाटकोंसे हमारे समाजका भी कुछ उपकार हो तथा उनकी प्रवृत्ति उधर विशेष रूपसे आकर्षित हो और वे इस काममें यशस्वी हों हमारी यह आन्तरिक कामना है।

कलकत्ता।
दीपावली सम्वत् १९७६ } उमादत्त शर्मा

आज इन शब्दोंको लिखते परमानन्द प्राप्त हो रहा है कि बहुत दिनोंके पश्चात हमारी हार्दिक इच्छा पूर्ण हुई है। सत्य नारायण नाटकको लिखकर हमें क्या लाभ हुआ इसका उत्तर भला बेचारी चामकी जिह्वा क्या दे सकती है ? यह लिख देनेमें हमें कुछ भी सकोच नहीं मालूम होता कि जिस समय हम इस नाटकके भजनोंपर भावोंपर और रङ्ग बिरङ्गी दृश्यावलीपर ध्यान दौडाते हैं उस समय हमारा मन सिवाय इन्हीं भावोंमें मग्न रहनेके अतिरिक्त और कुछ काम नहीं करता। कभी सदानन्द बनकर कभी उल्कामुख राजा बनकर सत्यनारायण भगवानकी पूजा करते हैं। कभी अपनेको साधु वैश्य मानकर सन्यासीके भेषमें भगवानके पीछे दौडते हैं और कभी भजनानन्दी अहीरोंके दलमें घुसकर भगवानका भजन खूब उछल उछल कर गाते हैं।

'सत्यनारायण भगवानकी कथा हिन्दू धर्मकी मुख्य धार्मिक वस्तु है। हिमालयसे लेकर कन्याकुमारीतक और आसाम से लेकर पेशावर तक एकही भाव भक्तिसे हिन्दू लोग सुनते हैं और अपनी सच्ची श्रद्धा प्रकट करते हैं। यह कथा स्कन्दपुराण का विशेष अंश है। इसमें कई कथायें सम्मिलित हैं। इन

कथाओंमें जो विश्वसनीय भक्ति कूट कूटकर प्रदर्शित की गई है। उसका प्रतिबिम्ब सनातन धर्मावलम्बी हिन्दुओंके हृदय गगन में सदैव प्रकाशमान रहेगा।

बरेली निवासी पंडित राधेश्याम 'कविरत्न' द्वारा विरचित रामायणकी तरह पंडित रामनारायण मिश्रने सत्यनारायण कथा को ठीक उसी सांचेमें और शुद्ध हिन्दी भाषामें ढालकर हिन्दी संसारका बड़ा उपकार किया है। पुस्तक पढ़कर हमें बड़ा आनन्द अनुभूत हुआ। इतनाही नहीं बल्कि इसी कथाको नाटक रूपमें परिवर्तन करनेका संकल्प भी कर डाला। भगवान् सत्य नारायणहीकी कृपासे वह संकल्प पूरा हुआ और आज नाटक रूपमें उपकर पाठकोंके सम्मुख है।

हमने भरसक प्रयत्न किया है कि जिस सिलसिलेसे कथा सुनाई जाती है वही क्रम नाटकमें भी रहे। नियमानुसार प्रह सन भी जोड़ दिया गया है। जो सज्जन हमारे लिखे नाटकाको खेलना चाहें यदि वे हमें सूचित करदें तो हम भी सहर्ष अपनी सम्मति द्वारा साहाय्यकर सकेंगे।

दीपावली सम्वत
१६७६
लकसा।

बलदेवप्रसाद खरे
चित्रकूट निवासी।

धार्मिक और राष्ट्रीय संस्थाओंके प्रेमी,
मारवाडी समाजके परम उत्साही
नवयुवक मित्रवर, श्रीमान्

बाबू भीमराजजी गुवालका

करकमलोमे सस्नेह

समर्पित।

बलदेवप्रसाद [illegible]।

पात्र-सूची

—※—

पुरुष ।

सूत ।

नारद ।

विष्णुभगवान् ।

सदानन्द । एक दुःखी ब्राह्मण

देवा लकड़िहारा

रामदत्त सदानन्दका लड़का

सौभाग्यचन्द एक कपट पण्डित

यजमान ।
धनू धुरन्धर । } सौभाग्यचन्दके शिष्य

शशिधर एक ब्राह्मण

उल्कामुख एक राजा

साधु एक बनिया

प्रभाकर साधुका नौकर

श्रीकान्त साधुका दामाद

उपरोहित ।

चन्द्रकेतु रत्नसारपुरका राजा

मन्त्री।

सेनापति राज्यके कर्मचारी

जय विजय	भगवान्‌के द्वारपाल।
प्रेमनाथ धूम पूर्णचन्द्र पिता	एक खेलके पात्र।

एक राजा

शौनकादिक ऋषिगण यमदूत, कुछ व्यापारी, ब्राह्मण गण चोर सिपाही चोपदार गायक मल्लाह, बालक, अहीरदल।

स्त्री।

लक्ष्मी।

श्रद्धा।

सदानन्दकी स्त्री।

दामिनी शशिभूषणकी लड़की।

लीलावती साधुकी स्त्री

कलावती साधुकी लड़की

सखियाँ पड़ोसिन।

* श्रीगणेशायनम *

विशेष दृश्य ।

(स्थान—नौमिपारण्य तीर्थ, सूत, शौनकादिक ऋषिगण)

॥ मंगलाचरण ॥

जय जय नारायण । अवधबिहारी ॥
जय अविनाशी । सुखकेराशी ॥ घटघटबासी ॥।
मोहन गिरधर गिरधारी ॥ ज० ।
करुणासागर सबगुणआगर । नटवरनागर ॥
जय धनदेवना मुरारी ॥ ज० ।
काम, क्रोध, मद, लोभ विरागी ।
गुण ग्राहक हो अनगुण त्यागी ॥
दुष्ट निकन्दन । जगबन्दन ॥ दुख भंजन ॥।
मुनिमनरंजन, हितकारी ॥ ज० ।

सूतजी—(दो०) जय कृपालु परमात्मा, पूर्ण सच्चिदानंद।
कोटि जन्म तक संतजन सेवें पद अरविंद॥

(छं०) जयति दयाके धाम, काम हैं अद्भुत जगमें।
बिधा आपका नाम चामके इक इक रगमें॥
विमल भक्तिकी धार बहा करती है सुखसे।
दीन हेतु अवतार कहा जय अपने मुखसे॥
तबल सबके हृदयमें फैला पूर्ण प्रकाश है।
दगे दर्शन अवस ही पूरा यह विश्वास है॥

बोलो सत्यनारायण भगवान्‌की जय (सबका जय बोलना)

भगवन्! आपका विराटरूप छोटेस छोटे कण और परमाणुमें विद्यमान है। आपहीके अलख और प्रकाशमान स्वरूपका अनुमान करते करते अज्ञान प्राणी भी चौरासी लक्ष योनियोंमें भटक आता है किन्तु फिर भी आपके अलौकिक रूपका दर्शन नहीं पाता। (हंसकर) इसका भी कारण है।

१ शौ०—महाराज! इसका क्या कारण है?

सूत०— जबतक प्राणी धर्मशास्त्रके गूढ तत्वोंपर विश्वास नहीं करता। यम नियम, और संयम पर लीन नहीं होता, मुक्तिमार्गके द्वारा ब्रह्ममंदिर तक जानेका उद्योग नहीं करता तबतक वह प्राणी काम, क्रोध, मद, लोभके चक्र राशिमें पडकर अपने जीवनका समय बिताया करता

है। दु ख पडने पर तो प्राथना सुनाया करता है कि तु सुख मिलने पर सब दुख भूल जाया करता है —

पड मायाके चक्रमें प्राणी होत बेहाल।
यह मेरा है द्रव्य, घर यह स्त्री, यह बाल॥

शौनक—महाराज! तो क्या दरिद्रताके मिटानेके लिये दूसरा साधन नही?

सूत०— नही सबसे बढकर साधन सत्यनारायण भगवान्‌की कथा सुनना है। उनकी सहस्रों ऐसी शिक्षाप्रद और धामिक घटनाए हैं जिनके सुननेसे प्राणी, माया मोहसे विरक्त होकर मोक्ष मागमें मग्न हो आवागमन भूल जाता है। कि तु इन घटनाओंके सुननेके लिये अधिक समय चाहिये। अस्तु विद्वानोने थोडीसी घटनाये कथारूपमें एकत्रित कर रक्खी हैं। उ हीं अमृतमयी कथाओ द्वारा अपनी आत्माको पवित्रकर सकते हैं। अपने चित्तको ईश्वरके चरणोंमें लगाकर मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं।

शौन०—महामुने! तब तो माया मोहसे ग्रसित सासारिक प्राणियोंको मनोरञ्जनके साथ इन घटनाओंको हृदय गम कराना चाहिए। भक्तिके साथ साथ मुक्तिका माग दिखाना चाहिये —

दिखादे आज वह कौतुक कि दुनिया दंग हो जाए।
सिखादे धर्मकी शिक्षा अनोखा रंग छा जाए॥

सूत्र०— अच्छा चलो, आज "सत्यनारायण' नाटकही खेलकर अपना मनोरथ पूर्ण करें —

इस कार्यहीसे देशका, धर्म उपवन हो हरा।
होगी विजय भी युद्धमें, होगी सुखी भारत धरा ॥

गायन।

जो चाहो भारतका उत्थान—करो तुम ईश्वरका गुणगान।
प्रथम हृदयको शुद्ध करो तुम।
कर्मयोग मय ध्यान धरो तुम।
शिक्षामय सद्भाव भरो तुम ॥
क्षमाशील से क्षमा।
दयावान से दया।
विजयवान से विजय।
सीख तुम बनो वीर बलवान ॥ करो० ॥
फन्देमें जो फंसा हुआ हो।
जुल्म फांस में फंसा हुआ हो।
काल ग्राहसे ग्रसा हुआ हो ॥
करे देशका प्यार।
रहे राम आधार।
होवे बेडा पार।
देश पर करो प्राण बलिदान ॥
(सबका प्रस्थान)

प्रथम दृश्य ।

स्थान—वन मार्ग ।

(नारदऋषिका भगवान् की प्रार्थना करते वीना बजाते प्रवेश)

गायन ।

दीनदयाल ! दया उर धारो ।
नाथ दयाकर देखहुगे जब ह्वइहै जग उजियारो ।
मर्त्यलोकमे मनमाने अब होत उपद्रव भारो ॥
नष्ट उन्हें कर करो सुखी जग, जो साँचे रखवारो ॥
दीनन कारण कीर्त्ति कमाई ह्वइहै तव मुख कारो ॥
प्रगट होय मोहि दर्शन दीजै करिहौ यह निपटारो ॥

अब मुझसे मर्त्य लोकके प्राणियोंका दुःख नहीं देखा जाता । अस्तु प्रथम विष्णु भगवान्‌के पास जाकर यहाँका समाचार सुनाऊं तब कोई दूसरा प्रबन्ध करूं ।

दृश्य परिवर्तन, स्थान—विष्णुलोक ।

(विष्णु भगवान् और लक्ष्मीजी सिंहासनपर विराजमान है । श्रद्धा लक्ष्मीजीके पाव दबाती है । दो सेविया पीछे चवर डुलाती है । जय विजय द्वारपाल खडे है । नारद जीको देखकर विष्णु भगवान्का स्वागत करना)

नारद—धन्य है भगवन् ! धन्य है।

"राम कामारि सेव्य, भवभयहरण कालमत्तेभ सिंह,
योगीन्द्र ज्ञानगम्य गुणनिधमजित निर्गुण निर्विकारम् ॥
मायातीत सुरेश खलबधनिरत ब्रह्मवृन्देक देवम्,
वन्दे कन्दावदातम् सरसिज नयनम् देवकस्यसे यमाराम् ॥

(रामायण)

(नारदऋषिकी उक्त प्रार्थना कर चुकनेपर सबका अपने २ स्थानपर विराजमान होना)

विष्णु—कहिए ऋषिराज ! आज किस कारण आपका शुभागमन हुआ ? मेरा धन्य भाग्य है जो आपका पुनः दर्शन हुआ ।

नारद—हे दीनानाथ, दीन प्रतिपालक भगवन् ! आप तो यहा एकान्तमें विराज रहे हैं और मर्त्यलोकमें राक्षसगण अत्याचार पर अत्याचार, उपकारके बदले अपकार, और न्यायका सहार कर रहे हैं। भगवन् ! आपका तो यह कथन है कि, मैं अन्तर्यामी हूं। तीनों लोक और चौदह भुवनका पालने वाला स्वामी हू —

असुरोंका अन्याय बढा है बढता जाता ।
कहते रुकता कण्ठ, नहीं कुछ बोला जाता ॥
नहीं किसीके काम है किसी के दाग नहीं ।
खावें क्या पीवें जब घरमें भूजी भाग नहीं ॥
गो ब्राह्मण साधू प्रजा भक्ति भाव भूले भजन ।
शीघ्र शत्रु सहारिए करहु कृपा करुणायतन ॥

विष्णु—नाहं वसामि वैकुंठे, योगिना हृदयेनच ।

मद्भक्ता यत्र गायन्ती, तत्र तिष्ठामि नारद ॥

हे नारदजी ! न तो मैं वैकुण्ठमें न योगियोंके हृदयमें जहाँ मेरे भक्त बुलाते हैं वे वहीं मुझे उपस्थित पाते हैं । मैं हर समय, हर घडी उनके पास रहता हू । भक्तोंके कारण अनेकों प्रकारके अपमान और त्रास भूख और प्यास सहता हू —

अगर भूलेसे कोई भी हमारा नाम गाते हैं ।
कमाते कीर्त्ति हैं सच्ची वही शुभ मुक्ति पाते हैं ।

नारद—भगवन् ! जब मैं मर्त्यलोकमें गया वहाके समस्त ऋषि मुनियो तथा वरणाश्रमवाले मानव जातिने त्राहि २ कर प्राथनाकी कि हमलोगोंका दुःख विष्णुभगवानसे सुनाया जाय । भगवन् ! भारतवर्में उनकी हृदय विदारक प्राथना और भीषण आर्तनाद सुनकर आपकी सेवामें उपस्थित हुआ हू ।

विष्णु—वीणापाणि मुनि महाराज! सुन लिया समझ लिया। मर्त्यलोकके प्राणियोंका कष्ट स देश सिरपर धारण कर लिया। ऋषिराज! आपको ज्ञात है कि जिस मान व समाजमें अपनी जातिका अपने देशका गौरव नहीं आपसमें एकता नहीं तो फिर उनपर जो अत्याचारियों द्वारा अत्याचार होते हैं वह केवल उन्हें जागृत करनेके लिए उन्हें कर्मपथ पर लानेके लिये उनकी दशा सुधारनेके लिए।

नारद—तो फिर क्या युद्ध छेड दिया जाय रक्तसे युद्धक्षेत्र रंग दिया जाय लोथोंसे भूमि भर दी जाय?

लगे सिखाने ज्ञान युद्धका आर्तनाद जब गूंजी है।
शान्ति आपको तीखी लगती निबलकी यह पूंजी है॥

विष्णु—(हँसकर) ऋषिदेव! मैं कब चाहता हूं कि वे अपनी शान्ति भङ्ग कर दें? मेरी इच्छा है कि वे अपने कर्तव्य पर डटे रहें सत्य धर्मका पालन करें, अपने लोककी अपने देशकी सेवा करें। फिर आकाश या पाताल लोकमें किसीका ऐसा साहस नहीं जो उनको पराजित कर सके।

नारद—महाराज! तो फिर सत्य धर्मके पालन करनेकी धार्मिक विधि बता दी जाय—

देता हूं सन्तोष उन्हें मैं अब यह जाकर।
कष्ट हरेंगे दूर रमापति करुणासागर॥

विष्णु—अच्छा, मैं प्रत्यक्ष रूपसे न जाकर अपनी एक मुख्य कला द्वारा प्राणियोकी रक्षा करूंगा। अर्थात जो सत्यनारायण भगवान् की हृदयसे सप्रेम पूजा करेंगे उनकी सम्पूर्ण मनोकामनाएं पूर्ण होगी।

नारद—(हंसकर) महाराज! आपने तो पूजाकी विधि अच्छी निकाली हमेभी कुछ न कुछ आय हो जाया करेगी।

विष्णु—हां आपका थोड़ासा चरणोदक मिल जाया करेगा।

नारद— तो क्या इस पूजा में अधिक सामग्री की आवश्यकता नही ?

विष्णु—नही इस कथाका राजा सेठ दरिद्र सब कोइ अपनी २ श्रद्धानुसार सुन सकते हैं

ना०— धन्यहैं भगवन्! आपने एक छोटी सी विधि बताकर दुखियोंका उद्धार किया।

(नारदका प्रणाम करना विष्णु भगवान्का आशीष देना टबला पर्दे का गिरना
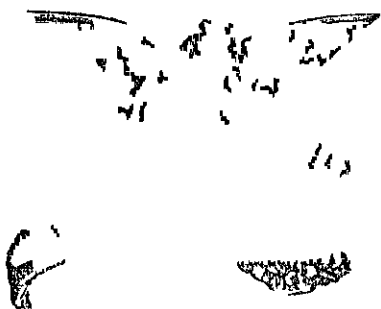
द्वितीय दृश्य ।

स्थान—वन मार्ग ।

(एक दुखी ब्राह्मणका गाते हुए प्रवेश ।)

गायन ।

आओ आओ सम्हालो रे ! अबतो दीनकी नावरिया
पडी भवर में चक्कर खावै ।
कभी अटककर टक्कर खावै ।
कोई युक्ति अब काम न आवै
धाधा २ बचालो रे अबतो०
तुम तो दाता सदा विधाता ।
नाम तुम्हारा समझ न आता ॥
कोई प्राणी पार न पाता ॥
डूबी शीघ्र निकालो रे अबतो०

सन्तानका सुख जीवनका आनन्द और जातीय गौरव सब धीरे २ भस्मीभूत होगये । अपनी दशा देखकर बचपन का खेल कूद माता पिताका प्यार एक एक करके नेत्रोंके सामुख आजाते हैं। भगवान्का भजन करते करते मैं हृद फूल गया। मार्ग देखते २ आखें पथरा गईं किन्तु वे भी न आए । (ऊपर देखकर) अच्छा, प्रभो ! यदि प्रेम होगा, आशा लता कुछ भी हरी होगी तो आपको यहाँ एकबार अवश्य खींच लायगी—

लगी है प्रेमकी आशा दुखोसे सर पटकते हैं ।
न जाने लाभ क्या होगा पडे भ्रमम भटकते हैं ।
हैं हमारी प्राण रक्षक ये बेचारी धज्जिया ।
देह पिंजर हैं बनाए, सूखी हुई ये हड्डिया ॥
निबल ससारमें यदि हू चतुर तुमको रिझाने में ।
चली हू मैं तुम्हारे से यहा तक खीच लाने में ॥
(दुखी होकर बैठना भगवानूका एव वृद्ध ब्राह्मणके भेषमें प्रवेश)

गायन

जगत में काम जो होता, नियम अनुसार होता है ।
मगर जो आलसी होता वही निज मान खोता है ।
चले जो चाल वैसीही कि जैसा देश चलता हो ।
उसीके हाथमें मोती लगाता ज्ञान गाता है ।
जपे जो प्रेम से मुझको उसीके पास रहता हू ।
दुखी है भक्त यदि मेरा, मुझे भी दु ख होता है ।
करो अब देशकी सेवा इसीमें सब भलाई है ।
मिलेगा फल उसे सु दर प्रथम जो फूल बोता है ।
न सोता सु खसे पापी निचोता क्या भला नगा ।
न धोता पापका पल्ला पडा दिन रात रोता है ।

(ब्राह्मण के पास जाकर)

भग०—ब्राह्मणदेव ! नमस्कार ।

ब्रा०—नमस्कार महाराज ।

भग०—कहो, किधर जाओगे ?

ब्राह्म०—महाराज ! मैं नगरकी ओर जाऊंगा।

भग०—आपका नाम ?

ब्राह्म०—मेरा नाम सदानन्द है।

भग०—सदानन्द अहाहाहा तब तो आनन्द ही आनन्द है।

ब्राह्म०—हां महाराज आपके विचारमें तो आनन्द है, किन्तु यहां आनन्दका द्वारही बन्द है। भिक्षावृत्ति धारण करने पर भी भोजनकी चिन्ता हर घड़ी सताया करती है—

न जाना सुख कुछ हमने बड़ क्यों भूप होते हैं ?
महाजन है किसे कहते महल किस रूप होते हैं ?
न आटा है न लकडी है न चक्की है न चूल्हा है।
भयंकर भूखके आगे, हमें सब ज्ञान भूला है।

भग०—ब्राह्मणदेवता ! बूढे होनेका दुख मत करो। मनुष्यको दुखके पीछेही सुख मिलता है। बारह वर्षके बाद घूरे काभी दिन फिरता है—

बदल देती है रंग कुछ प्रभुकी वह चतुर सेना।
जरासा काम करना है तुम्हें धनवान कर देना।
अगर तुम भाग्यशाली हो बनेगी लक्ष्मी चेरी।
करो तदवीर कहने पर, पलट जाए दशा तेरी॥

ब्राह्म०—वाह महाराज ! वाह आप तो मेरी हंसी उड़ाने लगे। भूली हुई बातको फिर सुनाने लगे—

चिढाते हो मुझे क्यों तुम ? कहां सदबुद्धि है मेरी।
बुढापेमें धनी होना कहां तकदीर है मेरी॥

भग० – किन्तु पहिले हमारा एक उपाय तो सुनलो —

न पैसा खर्च हो जिसमें वही साधन अनोखा हो ।

न हरा फिटकरी लगती मगर सब रंग चोखा हो ॥

ब्राह्म० —अच्छा महाराज ! बताइये आपकी भी युक्ति सुन लेना आवश्यक है ।

(स्व०) साधू सन्त गरीबसे, सबसे मिलिये धाय ।

ना जाने किस भेषमें नारायण मिल जाय ॥

भग० —घर जाकर भगवान् सत्यदेवका प्रेमपूर्वक व्रत, पूजन करना अपने जीवनका उद्देश समझ लो । उन्हींके भरोसे जीवन व्यतीत करना होगा । तब तुम्हारे समस्त भीषण संकट भस्मी भूत हो जायेंगे । अनुरागसे आटेका मधुर कसार बनाकर केले आदि सुन्दर फल सामने रक्खो । चन्दन अक्षत नैवेद्य फूलादि चढ़ाकर वन्दन पूजन करो श्रद्धापूर्वक कथा सुनो, तब तुम्हारा सारा कष्ट दूर हो जायेगा ।

ब्राह्म० —जो आज्ञा महाराज ! अब मैं कुछ दिन तक यही नियम पालन करूंगा । अभी तक आपके अतिरिक्त किसीने ऐसा उपाय नहीं बताया ।

भग० —अच्छा मेरे ग्रामका मार्ग आगया मैं इधरसे चला जाऊंगा ।

ब्राह्म० —तो क्या मैं भी आपके साथ चलूं नगर तक पहुंचा आऊं ?

भग०—नहीं २ तुम कष्ट न उठाओ—मै चला जाऊं गा। (प्रस्थान)
ब्राह्म०—(स्व०) परीक्षा मे करूं चलकर सहस्त्रों दिन बिताने है।
लगेगा हाथ पौ बारह नही तो तीन काने हैं॥
(प्रस्थान)

तृतीय दृश्य.

(मार्ग – दो मनुष्योंका प्रवेश)

१ मनु०—भाई! मतो शीघ्र लौट आऊं गा, मुझे दूसरे काम से जाना है।

२ मनु०—तो मुझ वहाँ क्या जादू दिखाना है? सदानन्द अपना पडोसी ठहरा। ईश्वर ने उसके दिन लौटायें हैं। इसलिये कथामें हमलोगोंके चलनसे उसका चित्त प्रसन्न हो जायगा।

१ मनु०—यह तो अच्छाही हुआ। (ऊपर देखकर) ईश्वर! इसी प्रकार सबकी सुधि लेना (प्र०) देखे आज प्रसाद में क्याक्या वस्तुए मिलती हैं?

२ मनु०—भाई! तुम तो प्रसादके लिये अभीसे तरसने लगे। मगर कुछ आरतीमें भी चढ़ानको लाये हो या खाली हाथही हिलाते चले आए हो?

१ मनु०—वाहवा कोई खाली थाड़े ही आता है। देखो एक टका कलके साग का बचा हुआ पास में मौजूद है (पैसा दिखाना)।

२ मनु०—धत्तेरे की भला तुझे ऐसी अश्रद्धा प्रकट करनेसे क्या लाभ होगा ?

१ मनु०—भाई ! यह तो अपनी अपनी इच्छा है।

२ मनु०—अच्छा चलो चलो देखो घडी संख बज रह हैं।

(दौड़कर जाना दृश्य परिवर्तन सदानन्दका अपने घरमें एक बन्द फाटक के बीच स्त्री सहित भगवान्की पूजा करते दिखाई पडना)

आरती।

जय सत्यनारायण ! ईश्वर परमान दा !!
जय दीनन दुखहता ! स्वामी बालमुकुन्दा !!
तेरी जय हो सदा विजय हो
जय, जय जय, जय,
जग सचराचर ! अखिलेश्वर अवध बिहारी !!
नाथ निरंजन ! प्रभु अवतारी मायाकारी !!
जय राम रूप, जय जगत भूप
जय, जय, जय जय

(दोनों ओर श्रोतागण खड़े है। सदानन्द प्रसाद बांटता आता है। स्त्री लडकेको लेकर खडी है सदानन्द प्रमसे थोडासा प्रसाद लडकेके मुंहमें डाल देता है। श्रोतागण आरती लेकर दक्षिणाभी चढ़ाते जाते हैं। फिर

सब कोई जय बोलते जाते हैं केवल स्त्री बच्चे सहित रह जाती है। देवा नामके लकड़िहारेका प्रवेश—लकडीका गट्ठर खडाकर आश्रय करना)

लक०—(स्व० आश्चर्यसे) क्या मैं मार्ग भूल गया ? इस स्थानपर तो एक सदानन्द नामका दरिद्र ब्राह्मण रहता था। वह मुझे रोज पानी पिलाया करता था। मैं उसे कभी चने, कभी जङ्गली फल दे जाया करता था। (सोचना) सम्भव है मेरे एक महीना इधर न आने पर कोई धनी आगया हो (हसना) वृक्ष वही कुआँ वही, मार्ग वही। किन्तु सदानन्द की झोपडी एक सुन्दर हवेली बन गई। उसके पास इतना धन कहांसे आया (सोचकर) हां जान पडता है कि, वह पूरा डाकू है। दीनके भेषमें अपना भेद छिपाए रहता है किन्तु सामने तो उसीकी स्त्री अपने बच्चेको खिला रही है अच्छा चलकर पहिले पूछ लेना चाहिए। (पास जाकर) ब्राह्मणीजी! पालागन।

ब्राह्म०—(पहिचानकर) कौन देवा! खुश रहो। अरे तू इतने दिनसे कहा रहा? ले, अच्छे अवसर पर आया! बैठ बैठ ठाकुरजीका प्रसाद लाती हूं (जानेकी इच्छा करना)

देवा०—ब्राह्मणीजी! ब्राह्मण देवता कहा है?

ब्राह्म०—वे ठाकुरजीकी पूजामें लगे हैं।

देवा०—(आश्चर्यसे) ठाकुरजीकी पूजामें? क्या इस बुढौतीमें भक्ति सवार हुई है?

ब्राह्म०—देवा! भक्तिको अवस्थासे क्या प्रयोजन?। भक्ति तो

बालक युवा, वृद्ध सबके हृदयमें निवास करती है। भला! तूही बता कि यदि तुझे पण्डितकी भक्ति न होती तो यहा क्यों आता ?

देवा०—(स्वगत) लो यह भी न जाने कबसे गुरुआनी बन बैठी। (प्रकट) ठीक कहती हो ब्राह्मणीजी! अच्छा तुम उन्हें बुला दो ता दर्शन करले और उनकी वस्तु देदे ।

ब्राह्म० —देवा! मुझे भी बताओ क्या वस्तु है ?

देवा० —उन्होंने मुझसे पहले सत्तू और पुराना गुड मागा था। देखो वही ले आया हू । (पोटली दिखाना)

(बच्चे रामदत्तको छोड कर ब्राह्मणीका बुलाने जाना । बच्चेके पास लकडिहारका जाना)

देवा० —(बच्चेसे) कहो पण्डितजी! सत्तू खाओगे ?

बच्चा— नहीं मैं पूडी खाऊंगा ।

देवा०—हाँ हा मुफ्तका माल पूडी ही छाननेमें खर्च होता होगा (प्रेमसे) रामदत्तजी! पूडी कहाँ पा गये ?

बच्चा— हमारी माताजी रोज बनाती हैं और मैं दूधके साथ चीनी डालकर खूब खाता हू ।

देवा०—(स्वगत) डाकेका माल है, चाहे मीठा डालकर खाओ चाहे निमकके साथ पचा जाओ (प्रकट) तो मुझे भी खिलाओगे ?

ब०—यह मैं क्या जानू मेरी माता जाने ?

(सदान द और ब्राह्मणी का प्रवेश)

दे०—पायलागन महाराज !

स०—(प्रसन्नतासे) आशीर्वाद। देना ! कहो आज बहुत दिनके बाद इधर आए ? क्या किसी झंझटमें फंस गये थे ?

दे०—हां महाराज ! पटके झंझटमें फंस गया था फिर ज्वरसे पीड़ित होकर सात दिन तक भूखा पड़ा रहा। अब चंगा होनेपर फिर लकड़ी लेकै आया हूं लीजिये अपना सत्तू और गुड़ (पोटली देना)

स०—(पोटली लेकर) अहाहाहा धन्य है मित्र ! बड़ी कृपा की किन्तु तू भूखा क्या पड़ा रहा ? धीरे धीरे यहां चला आता दवा दारू भी हो जाती और पेट भर अन्न भी खाता।

दे०—महाराज ! ब्राह्मणका अन्न फिर मुफ्तका माल खाऊंगा तो बिना मौतही मर जाऊंगा —

जनी है शक्ति हाथोंमें, कमाना और खाना है।
मुफ्तका अन्न बेजा है नरकमें दौड़ जाना है।

स० यह तो तुम्हारा अच्छा ज्ञान है कि तुम मेरा माल मुफ्तका माल कहते हो ? फिर तुम तो हमारे मित्र हो। मेरे घरमें आकर प्रति दिन हितकी बातें बताते हो। एक लोटा जलके बदले चार मुट्ठी चने दे जाते हो —

तुम्हारा ऋण चढ़ा सिरपर उसे, अबतो चुकाऊंगा।
चनोंके प्रेमके बदले, तुम्हें मोती दिलाऊंगा।

दे०— किन्तु अब तो तुम्हारे प्रेममें भूल कर भी न आऊंगा

स०—क्या क्यों ? क्या मुझसे कोई भूल हुई ?

दे०—(हँसकर) अरे यार पण्डितजी ! क्यों भेद छिपाते हो ? तुम तो पूरे चालाक और डाकू हो।

स०—(आश्चर्यसे) मित्रवर ! तुम यह क्या कह रहे हो ? आज इतनी धृष्टता क्या प्रकट करते हो ? मैंने तो कोई चालाकी नहीं की एक भी डाका नहीं डाला।

दे०—(व्यङ्ग भावसे) डाका नहीं डाला तो क्या यह मकान, यह वैभव इतनी बडी गृहस्थी मुफ्तमें बन गई —

बिना भोजन अभी उस दिन, तडपते और मरते थे।
चने लाकर तुम्हे देता तो अपना पेट भरते थे।

स०— प्रियवर ! तुम्हारी तो मेरे ऊपर बडी दया है। सच बताओ तुम्हारे हृदयके पवित्र विचार किसने पलट दिये —

न डाकू चोर हूँ भाई भजन ईश्वरका गाता हूँ।
करो विश्वास तुम मेरा कसम बच्चेकी खाता हूँ।

दे०— तो फिर मुझे भी अपना सारा भेद बताओ और मेरी शङ्का मिटाओ।

स०—अच्छा सुनो ईश्वरकी भक्तिका जो अटल भण्डार अपने अज्ञानरूपी हृदय भूमिके भीतर छिपा हुआ पडा था, धीरे धीरे ज्ञान और सतसङ्गकी प्रबल धाराकी रगड खाते खाते अज्ञानरूपी मिट्टीकी तरह बह गया और भक्तिका दिव्य प्रकाशमय कोष प्राप्त हो गया —

पडा अज्ञान पर्दा था जमा था पाप जीवनका।
हटाया आप ईश्वरने सुधारा कम जीवनका ॥

दे०- तो ऐसी सतसङ्गति करनेका सौभाग्य किसके साथ प्राप्त हुआ ?

स०—एक भक्तिके जौहरी ब्राह्मण, उसीके द्वारा उससे बताई हुई युक्तिसे मुझे यह सम्पत्ति प्राप्त हो गई। भाई! ईश्वरकी अपरम्पार महिमा है —

जहा थी झोपडी पहले महल अति भ य हैं ऊ चे।
जहा जङ्गल व नाले थे वहा हैं अब गली कू चे ॥
निराली है महा महिमा यही ईश्वरकी माया है।
बनाया जिसने जगभरका उसीने यह बनाया है ॥

दे० —(हाथ जोडकर) तो क्षमा करो ब्राह्मण देवता। मुझे क्षमा करो। आपके प्रति मेरे हृदयमे अनेक दुर्भाव उत्पन्न हो गये थ। प्रेमवश अनुचित श दोंका भी प्रयोग कर डाला। अस्तु मुझे क्षमा करो। दया करके अपनी दि य शिक्षा द्वारा मेरे हृदयका अन्धकार दूर करो —

किसीको जो बिना समझे महा पापी बताता है।
दुखी रहता सदा म में नरकमे आप जाताहै ॥

स०—देवा! तुम एक निष्कपट मनुष्य हो। तुम्हारा प्रेम तुम्हारी श्रद्धा देखकर मैं परम प्रसन्न हू। मैं चाहता हू कि अब उसी युक्तिसे तुम्हारा भी सङ्कटमयजीवन आनन्द

पूर्ण हो जाय और तुम भी उस कर्म के साथ साथ ईश्वर का गुण गान करो।

दे०— महाराज! मेरे ऐसे भाग्य कहाँ?

स० —इसमें भाग्य भगवतीकी आवश्यकता नहीं। केवल सत्य नारायण भगवान्का पूजन और व्रत धारण करो। एकादशी या पूर्णिमाके दिन भक्तिपूर्वक उनकी कथा श्रवण करो। बस केवल एक इसी उपायसे तुम्हारी सम्पूर्ण मनोकामनाए सिद्ध हो जायगी॥

दे०—जो आज्ञा महाराज! यह तो अत्यन्त सरल उपाय है आजहीसे घर जाकर मै यह कार्य प्रारम्भ कर दूंगा।

स०—अच्छा लो यह सत्यनारायण भगवान्का प्रसाद और अपनी लकडियोका मूल्य भी लेते जाओ।

(छत्रीसे नकर प्रसाद देना। सत्र की पोटलीसे दिव्य मेवेका प्रसाद निकालना देवाका आश्चर्यकर परो पर गिरना टवला पदे का गिरना)

चतुर्थ दृश्य ।

प्रहसन ।

(एक लम्पट पंडितका प्रवेश)

गायन

बे जोड नमूना मेरा ।
बडे बडे वेदान्तशास्त्री मुझे दिखाते पीठ ।
नही तो पलमे करू पराजित खूब उडाकर जीट । १ ।
दुनियाँ भरमें यदि मैं चाहू करदु उपसंहार ।
करदू केवल एक फूकसे स्वर्ग नर्क तैयार । २ ।
मै हू पूरा अ्रा बुभ्रड, ज्ञानी तावड तोड ।
पञ्चराज हु अन्ध प्रजाका भ्रम कम रा छोड । ३ ।

(गाना समाप्तकर हसता है)

हम ब्राह्मण फिर वेदपाठी ब्राह्मण । लघुकोमुदी सार स्वत और वैयाकरण हमारे कंठमें वेदशास्त्र कण कन्दरा मे ज्योतिष उङ्गलियोमें दाना का द्रय दाहिने हाथमे और बेजोड विवाह करादेना अपने बायें हाथका खेल है । बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय जा हे स्रो ।

अगर मेरे स्त्री बालबच्चे न होते तो एकबार कौडी कौडी जोडकर करोडपति बनकर अपने सिरका शनिश्चर

उतार डालता। घरके झगड़ोंने मेरा झोपड़ा चाट चाट कर खाली कर डाला। जब देखो तब दाल लाओ आटा लाओ साग लाओ लाओ लाओकी दिनभर आकाशवाणी होती है। इधर मैं भी यजमानोंसे बात बातपर पैसा लेकर अपने कोषकी पूर्ति करता हूं। ओम् भगवान पैसा विष्णुभगवान पैसा श्रीगणेशायनम पैसा प्रथमोऽध्याय समाप्तम् पैसा। चाहे समय हो चाहे कुसमय चाहे हँसी हो चाहे खुशी मगर पैसा छोड़ना तो बड़ा भारी पाप समझते हैं —

कैसा है यजमान विचारा किसका गौरव कैसा है।
मुझसे है क्या मतलब भाई मेरा ईश्वर पैसा है॥

(एक यजमानका प्रवेश)

यज०—पण्डितजी पालागू।

पण्डि०—जिओ यजमान! खूब जिओ अरे कौन रामहरख?

यज०—(हाथजोड़कर) हां महाराज! आपका सेवक।

पण्डि०—कहो भाई! आज क्या कारण है जो हमारे घरमें पधारे।

यज०—महाराज! आज यही कथा सुननेका विचार है। आज्ञा हो तो सब सामग्री लिवा लाऊं।

पण्डित—इसमें आज्ञाकी क्या जरूरत शुभ काममें विलम्ब कैसा? बड़ी प्रसन्नताके साथ सामग्री लिवालाओ और कथा सुन जाओ।

(यजमानका लौट जाना)

पडित—(प्रसन्न होकर स्वगत) बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय जो है सो। घर बैठ बिठाये चिडिया फस गई।

(अपने दा विद्यार्थियोको बुलाना)

पडित—क्योंरे धुरन्धर और धन्नू!

(नेपथ्यसे दोनोका बोलना)

जी गुरुजी महाराज!

पडित—(फिर पुकारकर) अरे! क्या कर रहे हो? शीघ्र इधर आओ। (दोनोका प्रवेश)

धन्नू—गुरू महाराज! याकरण याद कर रहे थे।

पडित—अरे वैसाखनन्दन, व्याकरण शब्द नहीं है।

धन्नू—तो क्या याहकरण है?

प०—(क्रोधसे) क्योंरे धन्नुआ! तू इतना स्वतन्त्र हो गया? मेरा क्रोध जानता है कि नहीं?

धन्नू—तो गुरूजी! आपही बताइये कैसा शब्द है?

प०—वैयाकरण।

धनु—(पढी उठाकर नाट्य करना) वैयाकरण।

प०—गदहासिंह इतना उछलता क्यों है? सीधे खडा रहकर बोल वयाकरण।

धन्नू—(मुह बनाकर) 'वैयाकरण।

प०—पागलदास! मुह क्यो बिगाडता है?

धन्नू—(रोनका बहानाकर) तो फिर गुरूजी कैसे कहू?

पं०—अच्छा अच्छा मत रो । क्यों धुरन्धर ! तुम क्या याद कर रहे थे ?

धुर०—पिंड पिंडस्य पिंडभ्याम् ।

प०—अच्छा सकी पणी बनानसे क्या रूप हागा ?

धुर०—पिंडा, पिंडी, पिंडू, पिंडे पिंडौ पिंड ।

प०—बालो सियाबर रामचन्द्रकी जय । जो है सो । अरे मूर्ख ! यह क्या गजब कर दिया ?

धुर० –गुरुजी ! आपहीने ता कहा है कि कक्का किकी कुकू, केकै काकौ, कक को भांति सूत्र और रूप बनाया जाता है ।

प० अच्छा पैसेका सूत्र बनाओ ।

धुर०—पसा पासक, पसारा पशुधन ।

ध नू— नहीं, पसा कहा पैसा पासे पासी ना खुजली ना खाँसी

प०— अरे अज्ञानियो ! अभी तक सूत्र बनाना नहीं आता । मारूगा पुस्तक ता निकल आपगा लाल स्याही (डाटकर) जाओ शीघ्र सख घड़ियाल लाओ और कथामें बैठकर बजाओ

दानो—जो आज्ञा ।

(धुरन्धर और ध नका प्रस्थान । दूसरी ओरसे यजमान और उसके साथी चौकी तथा प्रसाद लाते है । चौकीपर पण्डित जी जम जाते है—यजमान पं तजीको माला पहिनाते हैं चेल सङ्ख घन्टी लकर बजाते आते हैं)

पण्डित—(चेलोंसे) ठहरो ठहरा जब कथा एक अध्याय समाप्त हो जाया करे तब सङ्ख घडी बजाया करो ।

धुर०—जो आज्ञा किन्तु गुरूजी ! हम समाप्त होना कैसे जानेंगे ?

पण्डित मैं जब प्रथमोऽध्याय समाप्तम्, द्वितीयो अध्याय समाप्तम् आदि कहकर बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय कह दिया करूं तब तुमलोग अपना बाजा बजाना।

धुर० जो आज्ञा।

पण्डित—(कथा प्रारम्भ करके) श्री गणेशायनम। सूतजी कहते भये जो है सो, कि पहिले गणेशजीकी पूजा करे चन्दन वन्दन करे और सामने कुछ टका धरे। इसका भी कई पौरणोमें प्रमाण लिखा है, जो है सो। ओम् विष्णोर विष्णोर मङ्गलम् भगवानम् पैसा

(यजमानका पैसा रखना। उसी समय एक सुन्दर लडकीका और स्त्रियोंका आकर हाथ जोड़ कर बैठना। पंडितका लक्ष्मीके प्रेममें फंसना और मनमानी कथा कहते कहते चालाकीसे लक्ष्मीकी ओर देखना)

नैवेद्य धूप, दीप पैसा। अक्षत, पुष्पं चन्दनं पैसा (यजमानका पैसा चढ़ाते जाने) जो है सो

दुनिया है अचरजकी माया इसका कोई पार न पाया।

(इतनेमें लक्ष्मीका उठकर जाना पंडितका उसकी ओर देखते रह जाना)

प्रथमो अध्याय समाप्तम्, बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय, जो है सो।

(चलोंका बाजा बजाना। लक्ष्मीका फिर आकर बैठना। पण्डितका प्रसन्न होना)

श्रोतागण ! अब मैं फिर अपनी कथा आरम्भ करता हूं । चूंकि ये अध्याय ... है सत्यनारायण द्वितीय अध्याय प्रारम्भ । (इसका) बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय जो है सो ।

चाहे बुढा हो चाहे जवान चाहे स्त्री हो चाहे पुरुष और चाहे लड़का हो या लड़की । जब तक कथा होती रहे तबतक अपने स्थानसे न उठे । क्योंकि बीचमें उठकर जाना दोष है । इसलिये कथा वाचक और श्रोतागण दोनोंका ध्यान बट जाता है ।

(पंडितका प्रेमके कारण कथा कहनेमें मन न लगाना और जल्दी कथा समाप्त करनेका बहाना ढूंढना और एक ढोंग रचना)

श्रोताओ ! मेरे पेटमें दर्द उठ रहा है । मैं कथा कहनेमें असमर्थ हूं । अस्तु यहीं पर कथा समाप्त करता हूं । शेष कथा ... गी । अब सबको प्रसाद लेकर जाना चाहिये किन्तु पहिले पुरुष तब स्त्रियोंको प्रसाद लेना चाहिए ।

द्वितीयो अध्याय समाप्तम् । बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय जो है सो ।

(सारा जनता अपना अपना पाती पुरुष प्रसाद लेकर चले जाना ... पंडितजीको प्रसाद देना)

पंडित— आओ सौभाग्यवती ! तुम यहां आओ मैं माङ्गलीक चन्दन लगा दूं ।

(लड़कीका पासमें जाना पंडितका टीका लगाना और नाम पूछना)

पण्डित—तुम्हारा नाम क्या है ?

लड़की—मेरा नाम दामिनी है।

पंडित—(प्रसन्न हो) बड़ा सुन्दर बड़ा सुन्दर किसकी लड़की हो ?

ल०—महाराज ! मैं एक गरीब ब्राह्मण शशिधरकी लड़की हूं।

पण्डित—क्या शशिधरकी लड़की हो ! अच्छा २ । घबड़ाओ सब दुख दूर हो जायगा। (चेलेसे) घनू ! इसे दूना प्रसाद देना (घनूका प्रसाद देना) दामिनी ! कल भी कथा सुनने आना

दामिनी—जो आज्ञा। (प्रस्थान)

(दामिनीका जाते देखकर)

पंडित—बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय (धुर धरका संख बजाना)

पण्डित—(बिगड़कर) मूर्ख ! अब क्या संख बजाता है ? जो है सो

धुर०—(नम्र होकर) गुरुजी ! मैंने समझा कि अब तीसरा अध्याय समाप्त हो गया।

पण्डित—तुमलोगोंको कब बुद्धि आवेगी। मुझे यही चिन्ता है। जाओ सब सामान भीतर ले जाओ।

(दोनोंका सब सामान लेजाना)

(स्वगत हसकर) रामायण, महाभारत झूठा पौराणिक कथायें झूठी। अगर सच्ची है तो मेरी आंखें मेरा हृदय मेरी आशा। क्योंकि इन आंखोंने दामिनीकी सच्ची सुन्दर चमक देखी है हृदयने उसका प्रेम पहचाना है आशाने मुझे जीवित कर रक्खा है। नहीं तो यही शख घड़ि

थाल बजाते बजाते लोग मुर्दे स्मशान भी ले जाते इसमें असत्यका नाम नहीं है।

मैंने पेटमें दर्द होनेका बहाना किया था मगर अब दामिनीके वियोगसे सचमुच पेटमें भयंकर दर्द उठ आया है (पेट में हाथ फेरकर) हाय हाय।

धन्नू— (आकर) गुरुजी! आप कराहते क्यों हैं?

पंडित—बेटा! पेटमें बडा बेढब दर्द है।

धन्नू— तो क्या गधकबटी लेआऊं?

पंडित—बेटा! ये दर्द गधकबटीसे अच्छा न होगा?

धन्नू—तो फिर कैसे अच्छा होगा?

पंडित— बादल बरसते हों पंडितोंकी भांति मेंढक टर टर्र करते हों। बीच बीचमें दामिनी दमकती हो।

धन्नू—और मेघोंकी तरह मेरा शंख गरजता हो।

पंडित—हां हां, बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय जो है सो।

(आगे आगे धन्नूका कान पकडे हुये पन्डितका प्रस्थान और धन्नूका शंख बजाते और चतुर्थो अध्याय समाप्तम् कहते हुए जाना। पर्दे का उठना)

राजा, रानी और प्रजावर्गीय लोग तथा साधु समाज भगवान् सत्यदेवकी कथा श्रवण कर रहे हैं।

लेकर निकल गया। यह साधु हाथ मलकर रह गया। कपड़ेका व्यापार किया आग लग गई। चीनीका व्यापार किया बरसातमें वह भी पिघलकर बह गई। अब चिन्ताके सिवाय एक कौड़ी भी पासमें नहीं है।

क्या करूं, कहां जाऊं ? घरमें नई स्त्री चिन्ताके मारे बेचारी सूखकर कांटा हो गई है। अच्छा चलूं एकबार परदेशमें फिर व्यापारकर भाग्यको कसौटीमें कसकर खोटे खरेकी जांच करूं।

(प्रस्थान सामने मन्दिरमें उल्कामुख राजाको पूजन करते देखकर ठहर जाना राजाका सत्यनारायणकी आरती करना

आरती

जय हितकारी करुणाकारी। जय जय दाता भण्डारी
जगदाधारी अवधविहारी। सारी महिमा है न्यारी॥
माया मोह ग्रसित संसारी बालक वृद्ध, युवा नरनारी
सारी दुनिया बनी पुजारी, द्वार खड़े हैं आय भिखारी॥
निधनके आधार तुम्हीं हो त्रिभुवन सुखमाभार तुम्हीं हो
जय जय लीलाकारी आरति करूं तुम्हारी॥
बोलो सत्यनारायण भगवान्‌की जय।

(साधुका डरते हुए राजाके पास जाकर प्रणाम कर बैठना)

मुख०—कहिये आप कौन हैं, यहां कैसे पधारे ?

साधु— महाराज ! आपकी प्रेमपूर्ण भक्ति रसमयी लीला और

आरती देखकर विचार किया कि चलकर ऐसे योग्य योगीका ऐसे आदर्शभक्तका दर्शन करें।

धन्य भाग मेरे सफल, दर्शन दोनों साथ।
श्रेष्ठ पुजारी आप हैं पुजाधारी ॥ ४ ॥

साधु—महाराज! हमें उबारो। चिन्ताके सागरसे मायाके जालसे, लालचके बन्धनसे मुक्त करो। हे भक्तवर! मैं आपकी शरण हूं मुझे भी पूजाकी विधि बताइये और इसका महात्म सुनाइये।

राजा०—पहिले अपना परिचय कराओ और सारा वृत्तान्त सुनाओ।

सा०—मैं साधु नामका एक वैश्य हूं। भाग्यका मारा पीटा व्यापारकी चिन्तामें परदेश जा रहा हूं।

राजा—इसके पहिले क्या करते थे?

सा०—निरर्थक व्यापार जिसमें कई हजारका घाटा हुआ?

राजा—साधुजी! संसारमें जबतक भगवान्की भक्ति, तथा प्रेमसे पूजा नहीं करोगे तबतक तुम्हें कोई भी सुख नहीं मिलेगा। जो मनुष्य घृणित व्यापार द्वारा लाभ उठाकर पुण्यात्मा बनना चाहते हैं उन्हें पुन्यके बदले घोर पाप होता है। उस समय प्राणी लालचके प्रभावसे ज्ञानहीन अन्धा होकर अनेकों प्रकारके अनर्थ करता रहता है किन्तु अन्त समय बड़े कष्टोंसे व्यतीत होता है। फिर शेष पाप नर्ककुण्डोंमें जाकर ऋणकी भाँति भरता है—

कमाते जाल रचकरके, दिखाते धर्मकी बातें।
उन्हीके थूकतीं मुंहमें, निकम्मी नीच सब जातें॥
भजन, भोजनकी चीजोंमें मिलावट तोल देते हैं।
वही पापी! बड़ा फाटक नरकका खोल लेते हैं॥

साधु—क्षमा करिये महाराज! क्षमा करिये। मेरे पापोंका भण्डाफोड़ न कीजिये। उनके परिहारका उपाय बताइये। मैंने अपवित्र कपड़े, अशुद्ध चीनी मिलावटी घृत आदि बेंच बचकर धन कमाया था। जैसे आया वैसेही चला गया। आप तो अन्तर्यामी हैं सब कुछ जानते हैं मैं बड़ा पापी, महा घातकी हूं —

तुम्हारे सामने बैठा सहस्रा पापकी मूरत।
अधर्मी है यही डाकू, भयङ्कर घातकी सूरत॥

(अपनी छाती पर हाथ मार पछाड़ खाकर गिर पड़ता है)

ब्राह्मण—उठो साधुराज! उठो, अगर सबेरेका भूला सन्ध्या समय घर आजाय तो भूला नहीं कहाता। अब तुम अपने पापोंका प्रायश्चित करनेके लिये उद्यत हो तो मैं भी सर्वोत्तम साधन बतानेके लिये तैयार हूं —

अब पछताए होत क्या चिड़िया चुग गई खेत।
वही करेगा माफ अब जो सबको माफी देत॥

(साधु विह्वल होकर उठता है और ऊपर तथा चारों ओर सन्नाटा निरखा करता है)

साधु—संसारका सुख पत्नीका प्रेम धनकी आशा, छूट जा

मेरे शरीरसे निकल जा। आज मुझे अलौकिक आनन्द अनुभूत हुआ मेरा मोक्षदाता मिल गया, स्वर्गका पथ प्रदर्शक प्राप्त होगया तुमने लोगोंने मुझे नरक कुण्डमें गिरा दिया था। धनकी आशासे घीमें चर्बी मिलाकर पतीके निमित्त अशुद्ध खाना खिलाकर पुत्रकी आशासे, अछूत और अपवित्र कपड़े [illegible] अपना और हिन्दू धर्मका नाश करवाया। हाय, आज हम भारतके नाश करनेवाले ठेकेदार कहलाते हैं—

सिखाते वेदकी बात दिखाते ज्ञान दूना है।
मगर सत्कर्म करनेमें हृदय भण्डार सूना है॥
यही कारण है भारतकी दशा नित हीन होती है।
दुखी सन्तान रोती है न भोजन है न धोती है॥

गाना।

उबारो उबारो भगवन! हमें उबारो।
पापी और अधर्मी हम हैं आलसरूप अकर्मी हम हैं।
नीचोंसे भी जरा न कम हैं, दया हृदयमें धारो॥ उबा०॥
पतित, अपावन हैं भारी, सत्यानाशी व्यभिचारी।
धर्म घातकी बद्दाचारी नरककुण्डसे तारो॥ उबा०॥
(दो०) किस मुखसे मैं प्रार्थना करूं प्रेम व्यवहार।
डूबी नाव सम्भालिये तव साचे पतवार॥

राजा—साधुजी! तुम्हारी कातर प्रार्थना तुम्हारे अपराधोंकी

साक्षी है । उनका स्मरण चाहते हो तो आओ पहिले भगवान् का प्रसाद खाओ और अपना अन्तःकरण शुद्ध करो ।

(राजाका प्रसाद और तुलसीदल साधुको प्रेम पूर्वक देकर चरणामृत आंखोंमें लगाकर प्रसाद खाना)

राजा— जाओ बच्चा । इसे घर छोड़ जाओ और सत्यनारायणका ध्यान करके सच्चा व्यौहार और व्यापार चलाओ । परमात्मा तुम्हारी खोई हुई कीर्ति धन वैभव पुत्र पूर्णिमाके पूर्ण चन्द्रके समान पूर्ण कर देगा । किन्तु ध्यान रहे यदि तुमने अब भूलकर फिर बुरा काम किया तो जानते हो क्या दण्ड पाओगे ?

सा०—नहीं ।

राजा—अच्छा देखो ?

(ताली बजाना नर्ककुण्डका एक हृदय विदारक दृश्य—मिलावटी घृतके व्यापारीकी छातीका एक यमदूतका छुरीसे काट काटकर पास बैठे हुये कुत्तोंको खिलाना । अशुद्ध चीनीके व्यापारीकी छातीमें आरपार भाला घुसा हुआ और उसके गालोंमें लोहेके बड़े बड़े कांटे लगे हुये हैं दोनों ओरसे दो यमदूतोंका खींचना । अपवित्र कपड़ेके व्यापारीको एक जलते हुए खम्भेसे बांधकर उल्टा अधरमें टांगकर दो यमदूतोंका दो गर्म लोहे डण्डोंसे पीटना । साधुका आश्चर्य करना धीरे धीरे ड्राप गिरना)

ड्राप ।

प्रथम दृश्य.

स्थान—साधु वैश्यका गृह।

(साधु और लीलावतीकी वार्ता)

लीलावती—प्राणनाथ! कलावती सयानी होगई किन्तु, आपने अभी तक उसके योग्य वर ढूढनेका कुछ भी प्रयत्न नहीं किया।

साधु—मुझे तो घर गृहस्थीका झंझट, व्यापारका झंझट, नोकर चाकरोंका झंझट, गावके प्रबन्धका झंझट और तुम्हें केवल कलावतीके विवाहका झंझट। अच्छा, आजही मैं प्रबन्धकर तब भोजन करूंगा। क्या रे प्रभाकर!

(प्रभाकर नौकरका प्रवेश)

प्रभाकर—जी स्वामी!

साधु—आज मैं एक काम बताता हूं। उसे शीघ्र पूरा कर लाना होगा।

प्रभा०—सेठजी ! पहिले बता दीजिये कि क्या काम है ? ऐसा न हो कि, मुझे अस्वीकार करना पड़े ।

साधु—क्यों ?

प्रभा०—इसलिये कि आपका स्वभाव विचित्र आपकी आज्ञा विचित्र आपका काम विचित्र ।

साधु—यह कैसे ?

प्रभा०—देखिये पहिले आपने भांति भांतिके अनेकों व्यापारकर अपना सारा धन नष्ट कर दिया । तब परदेशकी सूझी लाख समझाने पर भी नहीं माने । फिर अपनीही इच्छासे लाट भी आए । अबकीबार ठाकुरजीकी पूजामें लग गये । अच्छा हुआ जो परमेश्वरने प्रार्थना सुन ली और खोटा कुन्दन बना दिया ।

दूसरी बात यह है कि व्यापारमें लाभ होते समय आपने सत्यनारायण भगवान् की कथा सुननेका प्रण किया था वह अभीतक नहीं सुनी सन्तान उत्पन्न होनेके अवसर तक टाल दिया ईश्वरकी कृपासे एक सुन्दर लड़की भी पैदा हुई तब भी आपने कथा नही सुनी । उसके विवाह होने तक टाल दिया । अब विवाह होनेका भी समय आ गया । कौन जाने अब भी आप सुनेंगे या नहीं ?

साधु—(हसना) ह ह ह प्रभाकर ! तू मेरा बड़ा पुराना सेवक है जो कहेगा असली बात कहेगा, मेरे हितकी कहेगा । अब तुझे विश्वास दिलाता हू कि मै पुत्री

कलावतीके विवाहके उपरान्त अवश्य कथा सुनूंगा।

प्रभाकर—अच्छा, अपना काम बताइये।

साधु—मुझे तुम्हारे ऐसा गुणवान सयाना और हितू सेवक आजतक नहीं मिला। अस्तु मेरी इच्छानुसार कलावतीके योग्य कहींसे भी रूपवान, गुणवान और धनवान वर ढूंढ लाओ। कार्य सिद्ध होने पर तुम्हें पुरस्कार भी दिया जायगा।

प्रभाकर—अगर रूपवान न मिले तो?

साधु—गुणवान और धनवान।

प्रभाकर—अगर गुणवान न हो?

साधु—तो धनवान।

प्रभा०—जो आज्ञा मैं जाता हूं और यह कार्य ठीक करके लाता हूं (प्रणामकर थोड़ी दूर जाकर फिर लौटकर) मगर कथा अवश्य सुनियेगा।

साधु—हां हां कथा अवश्य सुनेंगे।

प्रभा०—(फिर चलकर लौटता) तो प्रसाद मुझे भी दीजियेगा।

साधु—हां हां प्रसाद देंगे। अभीसे क्यों घबड़ाते हो?

प्रभाकर—(फिर लौटकर) मगर उसमें चरणामृत अधिक हो।

साधु—अब अगर लौटकर आओगे तो फिर कथा भी नहीं सुनूंगा और तुमसे कामभी नहीं कराऊंगा।

प्रभाकर—अच्छा लीजिये जाता हूं। (प्रणाम करके प्रस्थान)

लीला०—चलिये भगवान्‌का भोग लग गया है। आप भी भोजन कर लीजिये।

(प्रस्थान दूसरी ओरसे कलावतीका गाते हुए प्रवेश)

गायन।

अब तो स्वामीके मिलनेकी चाह भई रे।
घरका क्या काम करूं दिन भर मे राम जपू
आश भई प्रममयी उलझ गईरे। अब० ॥

(एक ओरसे सखीका निकलकर)

१ सखी—लीला अद्भुत प्रेमकी जीवन वृथा दिखाय।

(दूसरी ओरसे दूसरी सखीका निकलकर)

२ सखी—पति सेवाही प्रभकी महिमा देत बढाय ॥

(कलावती लज्जित होकर शब्द पलट कर गाती है)

अब तो ईश्वरके मिलनेकी चाह भई रे ॥ अब० ॥

१ सखी—(दूसरी सखीसे) देखा कलावतीकी कला हमको कैसा छला ?

२ सखी—बहन ! मैं तो कुछ भी नहीं समझी कि उसने तुम्हें क्या छला ?

१ सखी—वाहवा तू बडी भोली है। देखा नही कि, अभी तो गाती थी कि (गाकर) अब तो स्वामीके मिलनेकी चाह भई रे' और अब (चिढाकर) 'अब तो ईश्वरके मिलनेकी चाह भई रे

कला०—बहन मनोरमा! मेरा उपहास न करो। जो मैं कहती हूं सत्य कहती हूं।

१ सखी—चल हट बड़ी आई सत्य कहने वाली। झूठी भक्ति दिखाकर अपने मनका भेद छिपाती है।

कला०—(भेद छिपाकर) मैंने तो कुछ नही छिपाया।

१ सखी—तो फिर ईश्वर और स्वामीको एकही भावसे क्यो पुकारा?

२ सखी—हा हा अब मै भी समझ गई।

कला०—नही नहीं यह तुम्हारा भ्रम है। जब तुम दिव्यज्ञानसे देखोगी तो अपनी भूल समझ जाओगी —

पति ईश्वरमें जानलो एक बराबर शक्ति है।
प्रभु सेवासे भक्ति है पति सेवासे मुक्ति है॥

२ सखी—(१ सखीसे) अब बोलो क्या उत्तर है? बड़ा चमक चमक कर बात करती थी।

१ सखी—बहन कलावती! यह ज्ञानका भण्डार तूने कहासे सीखा। क्षमाकर, जो मैंने तेरा उपहास किया। ईश्वर तुझे सौभाग्यवती बनावे।

(दोनोका गले मिलना)

२ सखी—और मैं कहती हूं कि —

रूप कलाकी खान हो चन्द्रकला भण्डार।
कलावती तुम कोकला, कला रूप अवतार॥

(कलावती गायन प्रारम्भ करती है और साधु
तथा लीलावती दोनो पीछेसे सुनते हैं)

कलावतीका गायन ।

तुम चतुरा और सुलक्षणी हितकारी है ध्यान ।
मेरी यश मायादा समझ यों करती सम्मान ॥
टे०—मेरे जीवनको ढूढ लाओरी ! प्राणपति जो कहाए मेरा ।
मनमें स ताप जगी—भारी तन ताप लगी ।
प्राण प्यारा ज्ञान वाला
सु दर सुकमार ढूढ लाओरी ॥ प्रा० ॥
(दोनो सखी)—मानो तुम मेरी कही, मनमें घबडाओ नही ।
धीर धरो काम करो
(कला०)- मोहन दिलदार ढूढ लाओरी ॥ प्रा० ॥
लीला०—(प्रकटहोकर) बेटी कलावती ! यहाँ क्या कर रही हो ?
कला०—(हाथ जोडकर) माताजी ! सखियोंके साथ मनोरञ्जन कर
रही हू ।
लीला०—(प्रेमसे) मनोरञ्जन ! मैं जानती हू कि गानाही बजाना
मनोरञ्जन है कि तु घरमें कुछ काम धाम नही करना ?
कला०—माताजी ! म ता श्री ठाकुरजीको सिंहासन पर शयन
कराकर आई हू ।
लीला०— अच्छा अब जाओ और ठाकुरजीको जगाकर आरती
करो, फिर उन्हें सुखसागर पढकर सुनाओ ।
कला०—(हाथ जोडकर) जो आज्ञा, (सबका प्रस्थान)

लीला०—(साधुसे) देखा प्राणधन ! कलावती अब अपनी कलाओंका विकाश करती फिरती है। ऐसी सुन्दर योग्य पुत्री देकर परमात्माने मेरी गोद भरदी —

(आचल पसारकर और ऊपरकी ओर देखकर)

यही है प्राथना ईश्वर ! करो स्वीकार यह सेवा।
बने सौभाग्य अब इसका लगाओ पार यह खेवा॥

साधु—हमारे देशके नियम है कि पुत्र उत्पन्न होने पर धन लुटाते हैं। उत्सव कराते हैं कि तु कन्याके उत्पन होने पर ऐसा भाव प्रकट करते हैं मानो एक बडे भारी नये ऋणका भुगतान करना हो। यह महान भूल है।

पृथ्वी माताकी यदि कोई सच्ची सेविकायें हैं तो यही कन्याय हैं। समय समय पर ऐसी ही कन्याओंने भारतकी लाज रक्खी है। हर्ष है कि ऐसी ही एक सुयोग्य कन्या मुझे भी प्राप्त हुई है —

न हटती धर्मसे अपने न चिन्ता तेग तीरोंकी।
यही देवी है भारतकी यही माता है वीरोंकी॥

लीलावती—प्राणनाथ ! सत्य कहते हैं।

(लीलावतीका हाथ जोडकर उठना टबला पर्दे का गिरना)

द्वितीय दृश्य ।

स्थान—बाग

(श्रीकान्त नामक एक लड़केका प्रवेश)

स्वतन्त्रता सुख और इश्वर प्रदत्त वैभव तीनोंकी खोजमें नगर नगर, वन वन भटकता फिरता हू किन्तु कहींभी दिखाई नही पडते। हे इश्वर क्या आपने भी मुझसे प्रेम हटा लिया ? खैर मेरे भाग्यमे जो लिखा है होवे। उसकी मुझे तनिक भी चिन्ता नही।

गायन ।

मन तू ! वृथा जगतमे भटके ।
कोई नही है तेरा साथी, दूर खडे सब हटके ।
कर उन्नतमय काम देशके कायक्लेशमें डटके। मन ॥
कृष्ण पुकारा ने नहि आए रहे कौन घट अटके ।
आशा तारो टूट गइ है अधर गगनमें लटके ॥ मन ॥
माया तेरी वैरिन सगमे खेल खिलावत हटके ।
सदा चिढावत और हंसावत ज्यों नट नटपै भटके
॥ मन तो० ॥

(प्रभाकरका प्रवेश श्रीकान्तकी बात चुपचाप सुनना)

श्रीकान्त—(स्वगत हसकर)माया ! क्या तू मेरा पीछा न छोडेगी ?

(आवेशमें) दूर हटना। खबरदार! अब जो मेरे पास आई।
मूर्खा! जा तुझे तिलाञ्जलि देदी (हसना)

।(प्रभाकरका आश्चर्य करते हुए पास आकर पूछना)

प्रभाकर—विरक्त महाराज! तुम। किसको तिलाञ्जलि दे डाली

श्रीकान्त—जिसने मेरी यह दशा की।

प्रभाकर—तुम्हारी यह दशा किसने की?

श्रीकान्त—ईश्वरने, मायाने आशाने।

प्रभाकर—(आश्चर्यसे) तो क्या ईश्वरको भी तिलाञ्जलि दे रहे हो?

श्रीकान्त—हां ईश्वर माया और आशा तीनोंसे अपना सम्बन्ध तोड़ दिया। उन्होंने भी मुझे तुच्छ समझकर त्याग दिया।

(रोने लगता है)

प्रभा०—(स्वगत) जान पड़ता है यह बेचारा किसी विपत्तिका मारा ज्ञानहीन हो रहा है। देखनमें सुन्दर और कुलीन का बालक बोध होता है (प्रकट) विरक्त महाराज! मत रोओ। तुम्हारा रोना वृथा है। देखो, ईश्वरको मत भुलाओ, वह तो सदैव तुम्हारे पास रहता है। उसे तुम भूल सकते हो मगर वह तुम्हें नहीं भूल सकता। तुम्हारा तिलाञ्जलि देना वृथा है। मनकी कल्पनासे उसे दूर हटाना मूर्खता है —

भला जिसका पवन पानी, सभीका अन्नदाता है।
हृदयसे क्यों हटाते तुम, समझमें कुछ न आता है।

श्रीका त—मूल!

प्रभा०—भाइ! यदि स्त्रीका प्रेम दूर रहे हो तो स्त्री मिल सकती है क्योंकि, स्त्री मायाका असली स्वरूप है। फिर स्त्री प्राप्त होनेपर गृहस्थीके कार्योंसे छुट्टी पाकर ईश्वरकी सेवा तथा आराधना कर सकते हो। इसीको आशापर विजय भी प्राप्तकर सकते हो।

श्रीकान्त—भला, म अभागा स्त्री कसे पाऊगा!

प्रभाकर—अच्छा, पहिले अपना नाम और जाति वर्ण प्रकट करो

श्रीका त—मेरा नाम श्रीकान्त और वैश्यकुलका सेवक हू।

प्रभा०—'श्रीकान्त', भाइ! नाम तो अत्यन्त सुन्दर और जाति संज्ञा भी उत्तम है कि तु ऐसी दीनहीन दशामें भटकनेका क्या कारण ह?

श्रीका०—हितैषी जी! आपकी दयासे मुझे धनका कुछ भी लाभ नही ह। पुवजोंका कमाया हुआ अटल धन भण्डार भरा हुआ है। दु ख केवल इसी बातका है कि इतना वैभव इतना धन होते हुये भी इसका भोग करनेवाला कोई नही मेर स्त्री बाल बच्चे भी नही। इन्ही बातोकी सुधि आनेपर हृदयके अन्दर अनेक प्रकारकी कल्पनाए ज्वालाकी भाति भभक उठती हैं। जिनके कारण ज्ञान कानन भी जल उठता है और म पागल हो जाता हू। हा इस समय आपकी अमृतमयी शिक्षासे मेरा हृदय फिर हरा भरा गया हो रहा है —

स्त्री नही बालक नही, चिन्ता लगी है ये सदा।
मूरख जना देता उसे यह ठेगारा अपदा ॥

प्रभा०—श्रीकान्तजी ! घबडाओ नही मता तुमको विरक्त राम कता था। अच्छा हुआ जो रायानगरा आपसे भेट हो गई। आप मेरे साथ नगर चले। वहा साधु नामका एक नगरी ज्ञप है जिसका म चाकर हू। कलावती नामकी अत्यन्त सुन्दरी और गुणवती उसकी एकक या है। अस्तु वहा चलने पर तुम्हारी इच्छाए पूण हो सकती हैं।

श्रीकान्त—म सहर्ष चलनेको उद्यत हू।

प्रभाकर—किन्तु तुम्हें एक बात और भी निश्चय करनी होगी

श्रीकान्त—वह क्या ?

प्रभाकर—विवाह हो जाने पर तुम्हें श्रीनगरमें ही रहना पडेगा। उन्हीके साथ रहकर व्यापारादि करना होगा।

श्रीकान्त—मुझे यह स्वीकार है —

मै करूगा शक्ति भर सब कामजो होंगे वहा।
मेरी सफल आशा हुई धाम सब छोडा यहाँ।

गायन।

मेरे भाग्यकी कली आज तो खिल और।

दबी हुई थी भूमि गतमें होकर सत्यानाश।
ज्ञान दृष्टिसे चमक उठी फिर अद्भुत हुआ प्रकाश॥
कामकी चोखी निकली रे॥ मे०॥

सुख स्वर्गका अनुभव होता हृदय हुआ गम्भीर।
धन्य विधाता तेरी करनी हरी आप पीर॥
औषधि कैसी है मिली रे॥ मे०॥

(दोनोका प्रस्थान)

तृतीय दृश्य ।

(स्थान—साधुका गृह, विवाह मण्डप)

(एक ओर साधु तथा ब्राह्मणगण और दूसरी ओर लीलावती तथा कुछ स्त्रियाँ खड़ी मंगलगीत गारही हैं ।)

गायन ।

बजै आज मंगल बधावा ।

अनुपम चहुओर फहरे पताका प्रभापूर्ण मण्डप सुहावा ।

अपूरब साज आज जाई मनोहर भलो रूप दूल्हा दिखावा ।

(गाना समाप्त होने पर साधु अपना भाग्य सराहता है)

साधु—पण्डितजी ! ईश्वरकी कृपासे हमें योग्य दामाद मिल गया । वास्तवमें कलावती बड़ी सौभाग्यवती कन्या है ।

१ ब्रा०—साहजी ! अब विवाह कार्य प्रारम्भ होनेमें क्या विलम्ब है ?

साधु—केवल उपरोहितजीके आगमनकी प्रतीक्षा है ।

२ ब्रा० देखिये ! सामने उपरोहितजी अपनी पोथी पुस्तक दबाये चले आरहे हैं ।

(उपरोहितका प्रवेश साधुका उठकर प्रणाम करना)

साधु—महाराजके चरणोंमें सेवकका प्रणाम स्वीकार हो ।

उप०—सुखी रहो जुग जुग जियो । कहो साधुजी ! विवाहमें क्या कोई विलम्ब है ?

साधु—नहीं, महाराज! केवल आपकी प्रतीक्षा थी।

उप०—अच्छा वर कन्याको बुलवाओ और कार्य प्रारम्भ किया जाय।

(वर कन्याका प्रवेश चौकीमें बिठाया जाना। पण्डितका हाथमें कुश और जललेकर मन्त्रोच्चारण करना तथा विवाह कराना)

उप०—(उठकर) साहजी! आपका कार्य निर्विघ्न समाप्त होगया अब मैं भी घर जाना चाहता हूं।

साधु—जो इच्छा महाराज! आप ब्राह्मणोंकी कृपासे मेरा कार्य समाप्त हुआ। इसी प्रकार कभी कभी दर्शन देकर कृतार्थ किया करें—

निर्विघ्न बीता काम मेरा, पूर्ण इच्छा होगई।
लौटा हमारा भाग्य सारा दूर चिन्ता होगई।

(उपरोहितके चरणोंमें मस्तक झुकाना)

उप०—साहजी! इसी प्रकार तुम्हारी सब मनोकामना पूर्ण होगी।

(उपरोहित ब्राह्मण और साधुओंका जाना)

लीला०—दासी! अब तू वर कन्याको भीतर लेजाकर भोजनादि का प्रबन्ध कर।

दासी—जो आज्ञा।

(दासीका वर कन्याको भीतर ले जाना)

लीला०—स्वामी! हमलोगोंकी निराशा आशा रूपमें परिणत होगई।

साधु—प्यारी! तुम्हारी अन्तरात्माने कलावतीकी जो महीने

पेममें रक्षा की है उसीने उसके गुण और भेदका स्वरूप पहिचाना है। अस्तु तुम्हारी निष्कलंक और निस्वार्थ प्रेरणाने कलावतीको सब प्रकारसे सौभाग्यवती बनाया है। इस सफलताके लिये ईश्वरका लाखों धन्यवाद हैं।

लीला०— धन्यवाद स्वामी! अब धन्यवादसे काम न चलेगा। आपने कहा था कि कलावतीका विवाह होजाने पर सत्यनारायण भगवान्की कथा सुनूंगा।

साधु (स्व०) यह तो एक एक बात तक याद रखती है (प्रकट संकोचसे) प्यारी! धैर्य धरो। मैं शीघ्र ही कथा सुनूंगा।

लीला०—कब सुनेंगे मेरे नाथ! आपका वादा तो हो गया। शुभ काममें विलम्ब अच्छा नहीं।

साधु—अच्छा व्यापार और इस धन्धेकी उन्नति होने दो, कथा सुनना कौन बड़ी बात है यह तक हो सकता है।

(प्रभाकरका प्रवेश)

प्रभाकर—साहुजी! दूकानसे नौकर आया है। वह कहता है कि दूकानसे मुनीम सब रुपये लेकर भग गया।'

साधु—क्या रुपये लेकर भग गया!

प्रभाकर—जी।

साधु—(लीलावतीसे) तुम्हें तो कथाकी सूझी है। यहाँ घाटे पर घाटा आ रहा है। प्रथम विवाहमें दो तीन सहस्र रुपये स्वाहा हो गये। दूसरे मुनीम चोरी करके चम्पत हो गया!

लीलावती—स्वामी ! यदि आप कथा सुन डालते तो यह दशा क्यों होती ?

साधु—अरे मूर्खा ! अगर कथा सुननेसे दुख टल जाय धन मिल जाय तो मै रोज कथा सुना करू । फिर तो कभी कष्ट सहनेका समय भी न आवे ।

लीलावती—तो क्या राजा उल्कामुखने झूठा उपाय बताया ?

साधु—हा हा झूठा बिल्कुल झूठा । (स्व०) दिनभर "कथा" "कथा चिल्लाया करती है । मुझे यथ चिढाया करती है (प्रकाश डांटकर) चल हट मेरा माथा न खा ।

(लीलावतीका धीरे धीरे रोना)

साधु—हैं तू नया ढोंग रचने लगी ? आसू बहाने लगी ?

लीलावती—स्वामी ! आप सत्यनारायण भगवान्का इतना तिरस्कार करते हैं । इसीसे मुझे दुख होता है ।

साधु—अच्छा दुख मत करो । मैं कहता हू कि व्यापारकी दशा सुधरने पर अवश्य कथा सुनूगा ।

(लीलावतीका प्रणाम करके जाना साधुका देखते रह जाना ।)

साधु—(प्रभाकरसे) देखा प्रभाकर ! त्रिया चरित्र इसीका कहते हैं ।

प्रभाकर—साहुजी ! त्रिया चरित्र इसे कैसे मानूं ? सेठानीजी तो ठीक कहती हैं । (श्रीकान्तका प्रवेश)

श्रीकान्त—पिताजीकी सेवामें प्रणाम ।

साधु—चिरजीवो हो श्रीकान्त ! सदा सुखी रहो ।

श्रीकान्त—पिताजी ! आज आप इतने उदास क्यों हैं ?

साधु—बेटा ! रोजगारमें घाटा आ गया है।

श्रीकान्त—तो इसमे चिन्ता करनेकी क्या आवश्यकता ! फिरसे परिश्रम करके कमी पूरी कर ली जायगी। किसीने ठीक कहा है कि —

पुरुष सिंह जो उद्यमी लक्ष्मी ताकी चेरि

साधु—बेटा ! मेरी इच्छा है कि एकबार परदेश चलकर फिर कमाय और धन संग्रह कर लायें।

श्रीकान्त—मैं चलनेके लिये सहर्ष उद्यत हूं। आपकी सेवाके लिये सदैव कटिबद्ध हूं।

साधु—प्रभाकर ! जाओ परदेश जानेके लिये तैयारी कर लाओ और सेठानीको भी बुला लाओ।

प्रभा०—जो आज्ञा (प्रभाकरका प्रस्थान)

साधु—बेटा ! मेरी इच्छा है कि, तुम घरही में रहो। तुमने अभी परदेशके दु खोंका अनुभव नहीं किया है। इसलिये तुमको अधिक कष्ट होगा ।

बच्चे तुम्हीं एक आँखोंके तारे।
तुम्हीं एक घरमें सहारे हमारे॥
न जाओ तुम्हें दु ख होगा उठाना।
सदा चाहिये गेह धन्धा चलाना॥

श्रीकान्त—पिताजी ! आप मेरे दु खोंपर ध्यान न दें। मुझे कष्टोंकी कोई चिन्ता नहीं। मैं आपके थके हुए

शरीरकी थकावट अपने हाथोंसे दाब दाब कर दूर करूं
गा और अपना सौभाग्य समझूंगा। शीतल पवनमें धीरे
धीरे गाना सुनाकर आपको आनन्दित करूं गा।

सदानन्द—अच्छा, जब तुम्हारी ऐसीही इच्छा है तो सहर्ष
चल सकते हो।

(लीलावतीका लोटा डोर दरी आदि लिये प्रवेश)

सदानन्द—प्यारी! अब मैं कुछ दिनके लिये फिर परदेश जाना
चाहता हूं। तुम घरका काम भलीभांति देखना
भालना।

लीलावती—बेटा श्रीकान्त तो यहीं रहेगा?

सदानन्द—नहीं, ये भी मेरे साथ जानेका आग्रह कर रहा है,
कोई चिन्ता नहीं। मैं उसे कोई कष्ट न होने दूंगा।

लीलावती—अच्छा, जाइये प्राणनाथ! सफलता प्राप्त होने पर
शीघ्र दर्शन दीजियेगा।

(साधु तथा श्रीकान्तका सामग्री लेकर प्रस्थान। लौट लौट
कर देखते जाना। लीलावतीका चुपचाप देखते रह जाना।
हृदय गदगद होना आंसू पोछकर रह जाना।
वियोगका भीषण-दृश्य। पर्देका गिरना)

चतुर्थ दृश्य
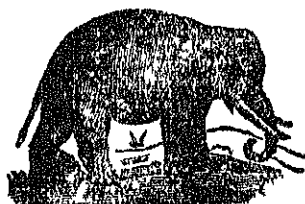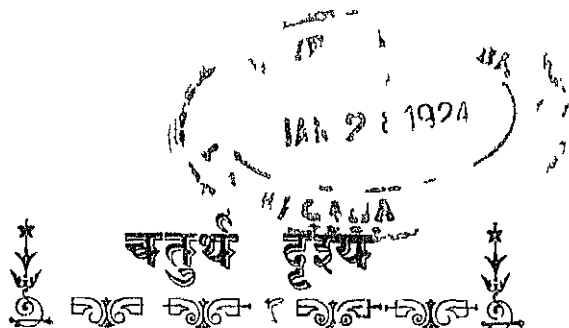
स्थान—वनमार्ग, दो चोरोंका प्रवेश ।

१ चोर—भाई ! संसारके लोगोंकी बात सुनकर हंसी आती है ।

२ चोर—हंसी आती है ? ऐसी हंसीकी कौनसी बात है ?

१ चोर—यही कि, चोरी तो सब कोई करते हैं, किन्तु सच्चे चोर हमीं बताये जाते हैं ।

२ चोर—(हंसकर) जो हमें चोर कहे उसका सारा घर चोर

१ चोर—अरे यार ! इतना ही नहीं बल्कि मैं कहूंगा कि राजा चोर मन्त्री चोर, नौकर चोर, सेठ चोर प्रजा चोर और चोरको चोर क्या कहैं ! सारी दुनिया चोर है ।

२ चोर—भाई ! राजा मन्त्री कैसे चोर हैं ?

१ चोर—अपना स्वार्थ सिद्ध करनेके लिये राजा और मन्त्रीको भी बहुतसी बातें चुरा रखनी पडती हैं, तभी सफलता मिलती है ।

२ चोर—तो आज इसी तरहसे खाली हाथ घर लौट चलेंगे या कुछ माल भी लेते चलेंगे ?

१ चोर—अच्छा, चलो । अभी तो दो पहर रात्रि बाकी है । पासही राजाके महलसे कुछ माल निकाल लावे ।

२ चोर—क्या चोरके घरमें चोरी ? अभी तो तुम उसे चोर बता रहे थे !

१ चोर—हाँ हाँ वह चोर तो हम छिछोर । भाई ! चलकर भाग्य की परीक्षा करनी चाहिये या यहींपर खड़े खड़े डरना चाहिये ?

२ चोर—ऐसा न हो कि पहरेवाले देख लें तो फिर भागते भागते प्राण निकल जाय ।

१ चोर—नहीं, नहीं मैंने सब उपाय सोच लिया है ।

(प्रस्थान । दूसरी ओर से साधु और श्रीकान्तका प्रवेश)

श्रीकान्त—पिताजी ! अभी रात्रि अधिक मालूम होती है । अब आप भी थोड़ासा विश्राम कर लें ।

साधु—बेटा ! अब निद्रा नहीं आयगी ।

श्रीकान्त—अच्छा आप लेट जाव और मैं ईश्वरका भजन सुनाऊं । इससे आपको निद्रा अवश्य आ जायगी ।

(साधुका लेटना पासही श्रीकान्तका बैठकर भजन गाना)

गायन ।

रमापति जपा करूं सिया वर भजा करूं ।
धनुष बाण हाथ लिये जगत पती नमो नमो । रमा० ॥
धरो हिय ध्यान सदा यही मन मोक्ष-प्रदा ।
योगीगण जपत रहत सत्यव्रती नमो नमो । रमा० ॥

(गाना बन्दकर साधुको सोता देखकर स्वयं सोनेकी इच्छा करना)

पिताजी सोगये । नील मणि आकाशमें चमकते हुए

तारोंका प्रकाश शा त हो गया । पक्षी गण अपने कलरवसे प्राणियोंका प्रात कालीन अनन्त सुख अनुभव करनेकी सूचना कर रहे हैं। जो हो कि न्तु घोर निद्रा देवीके प्रबल आक्रमणके कारण सचेष्ट रहनेकी शक्ति नहीं। अस्तु बिना विश्राम किये चैन नहीं।

(पासही लेट जाना और सो जाना । दूसरी ओरसे चोरोका चोरीका धन लिये धीरे धीरे आना)

१ चोर—बस बस यही ठीक है। देखना चाहिये क्या क्या वस्तुए प्राप्त हुई हैं ?

(गठरी खोलकर एक एक वस्तु निकाल कर देखना)

१ चोर—यह पहरेदारका कोट है।

२ चोर—यह दीवा न साहबकी धोती है।

१ चोर—यह कश्मीरी दुशाला है ?

२ चोर—यह चांदीकी छोटी स न्दूकची है। (सोते हुए लोगोंकी ओर देखकर)

१ चोर—चुप चुप धीरे धीरे बात चीत करो। नहीं तो ये लोग सुन लेंगे।

२ चोर- सुन लेंगे तो क्या करेंगे ? राजाके सिपाही तो कुछ करही न सके ये क्या करेंगे।

१ चोर—(नेपथ्यकी ओर देखकर) देखो सामनेसे वही लोग दौड़ते आ रहे हैं। चलो भागो। जल्दी भागो

(धन उठानेकी इच्छा करना)

२ चोर—पकड़ेसे बच जायगे तो फिर कहींसे चोरी कर लायगे।

(एक ओर दोनो चोरोंका भागना। तीन चार सिपाहियोंका दौड़ते आना)

१ सिपाही—बस बस मिल गया।

२ सिपाही—(साधु और श्रीकान्तको सोते देखकर और चोर समझकर) देखो बेईमानोको कैसा ढोंग करके सो गये हैं ?

३ सिपाही—बस पकड़ लो देखते क्या हो ?

(दो सिपाहियोंका जाकर सोते हुए साधु और श्रीकान्तको जगाकर पकड़ना दोनोंका उठकर आश्चर्य करना)

साधु—हमने क्या अपराध किया है ?

२ सिपाही—(पहिले सिपाहीसे) देखो दोनो बेईमान कैसे भोले बन गये हैं। (साधुसे) चोरी करके भी पूछते हो कि "क्या अपराध किया है' ?

३ सिपाही—यह तो वही कहावत हुई कि 'उलटा चोर कोतवालको डांटे।

साधु—(आश्चर्यसे) 'चोरी'—सिपाहीजी क्या आपके हृदयमें विश्वासके लिये स्थान है ?

१ सिपाही—है, मगर तुम्हारे लिये नहीं।

साधु—मेरे लिये नहीं तो किसके लिये ?

२ सिपाही—बकवाद मत करो। अब सीधे राजदरबारमें चलना होगा।

श्रीकान्त—सिपाहीजी! अगर तुम्हारी आंखे न्यायकी आंखे है
तो उन आंखोंसे देखो कि हम कौन हैं?
हमें धमकी दिखानेमें तो आपभी उस्ताद हैं।
देखो! भला हम चोर हैं या साहुकी औलाद हैं॥

१ सिपाही—(हँसकर)
चुराकर माल ले आना बताना साहुका बेटा।
लगाया सत्यमें चौका कमाया धर्म सब मेटा॥

साधु—तुम्हारी आंख फूटी है? हृदयका ज्ञान तक अन्धा।
प्रपंची हो छली झूठे तुम्हारा काम सब अंधा॥

२ सिपाही—हमारा काम अंधा है तो हम कहते हैं कि, तुम्हें मारभी खानी पडेगी।
बिगडते हो अधिक उलटा तुम्ही काहे वृथा बोले।
न जाने क्या हमें करते, न चोरी जो किये होते॥

श्रीकान्त—सिपाहीजी! चोरीका नाम लेकर मेरे भयंकर दावानलमें क्यों आहुति छोडते हो? थोडीसी कमाईके बदले क्यों अपने ईश्वरी बन्धनको तोडते हो?
नही है जुल्म यह अच्छा अधम व्योहार करते हो।
बुरा करते हो राजाका नरक तैयार करते हो॥

२ सिपाही—उपदेशकजी! चलिये। कारागारकी दीवारोंको अपना ललित व्याख्यान सुनाइयेगा। उन्हींको कोई अच्छा व्योहार बताइयेगा——

(स्थान—रत्नसारपुर)

दरबार—(राजा चन्द्रकेतु मन्त्री सेनापति चोपदार यथा

स्थान। गायक का गान-वाद्य होना।)

गायन।

रहोगे कब तक अन्तर्द्धान ?

मोहन आज बजाओ ब्रजमें फिर मुरलीकी तान।

आग लग रही है कुञ्जनमें सूख रहे सब ताल॥

गाये सब डकराय रही हैं कहा गये गोपाल।

प्रकट हो जाओ दयानिधान॥

(राधेश्याम)

(राजाका पुरस्कार देना—गायकका पुरस्कार लेकर प्रस्थान।

दूसरी ओरसे एक सरदारका कुछ अपराधी

बालकोको लिये प्रवेश।)

(मंत्रीका प्राणदण्डका आज्ञापत्र हाथमें लेना)

सरदार—(प्रणाम करके) महाराज! अपराधी उपस्थित हैं।

मन्त्री—प्रेमनाथ किसका नाम है ?

प्रेमनाथ—(आगे बढ़कर प्रणाम करके) महाराज! मेरा

नाम है।

मंत्री—क्या तुम्हीं स्वर्गीय बालकको प्राण दण्ड की आज्ञा सुनाने वाले न्यायाधीश हो ?

प्रेमनाथ—जी ! उस बालकका हत्यारा न्यायाधीश मैं ही हूं ।

मंत्री—तुमने ऐसी आज्ञा क्यों दी ? क्या तुम्हें यह ज्ञात नहीं था कि तुमसे बड़ा कोई दूसरा भी न्यायाधीश मौजूद है ?

प्रेमनाथ—मैं यह भली भांति जानता था कि मुझसे भी बड़ा कोई न्यायाधीश है किन्तु एक साधारण खेलमें अपने प्राणके प्यारे परममित्रको कौन प्राण दण्ड दे सकता है ।

बिछुड़ कर मित्र हमसे भी, न जाने क्यों छिपा बाहर ।
बदी थी भाग्यमें हत्या चढ़ा है पाप अब सरपर ॥

मंत्री—अच्छा, इस घटनाको याथातथ्य वर्णन करो ।

प्रेमनाथ—प्रधानजी ! हम सब बालक नगरके बाहर एक बाग में खेल रहे थे । अन्तमें खेल निश्चय हुआ न्यायालय की निरंकुशता । कुछ बालक गांवके किसान बने कोई अनुसन्धान कर्ता या कोतवाल चुना गया । सब सम्मतिसे मैं न्यायाधीश चुना गया । अभिनय प्रारम्भ हुआ । किसानोंने खेतके बँटवारेमें लाठियां चलाई । फौजदारीमें एक किसानके प्राण चले गये । अन्तमें कोतवालने अनुसन्धान किया । न्यायालयमें अपराधीको प्राण दण्डकी आज्ञा दी गई ।

मंत्री—प्राण दण्ड किस प्रकार दिया गया ?

प्रेम० —एक काली भस्म लाकर खड़ी की गई। पानी पीनेकी ओर को फाँसीका फन्दा बनाकर ऊपर वृक्षकी डालमें छोड़ दिया गया। अपराधीके गलेमें फन्दा डालकर कुछ लड़कोंने रस्सी खींची। रस्सी ऊपर अधरमें पहुँचकर डालमें अटक गई। फिर अपराधी न तो नीचेही आ सका और न ऊपर ही पहुँच सका। ऊपर हम सब लड़के भी पहुँचनेमें असमर्थ थे। इस प्रकार हमारे मित्रने हम सबको तड़पते छोड़कर स्वर्गका रास्ता लिया। (शोक करना)

मन्त्री—तुम वृक्ष पर चढ़ना जानते हो ?

प्रेम०—नहीं।

मन्त्री—धूम्र किस बालकका नाम है ?

धूम्र—(आगे बढ़कर प्रणाम करके) श्रीमान्! सेवक उपस्थित है

मन्त्री—तुमने इस खेलमें किस पदका भार ग्रहण किया था।

धूम्र—महाराज! मैं कोतवाल चुना गया था ?

मन्त्री—तुमने चोटखानेवाले बालकके कोई चोट देखी थी ?

धूम्र०—जी नहीं कल्पित चोट मानकर स्वर्गीय बालक अपराधी बनाया गया था। देखिये चोट खानेवाला बालक भी सामने खड़ा है।

मन्त्री—तुम्हारा क्या नाम है ?

पूर्ण०—मेरा नाम पूर्णदत्त है।

मन्त्री—पूर्णदत्त! लाठी चलनेके समय तुम्हारे कोई चोट आई थी।

पूण०—नहीं मैंने सब सम्मतिसे, जैसा नाट्य मुझे बताया गया था शवकी भाँति पड़ा रहा।

मन्त्री—अच्छा, तुम शवकी भांति बनकर वही नाट्य दिखलाओ।

(पूणदत्तका लेट जाना। दो बालकोंका पांव और सिर पकड़कर उठाना। पूणदत्तका लकड़ीकी भांति उठ आना)

मन्त्री—छोड़ दो। अब मैं न्याय नीतिके अनुसार अन्तिम आज्ञा सुनाता हूं। खेल तो साधारण था किन्तु प्राण दण्डकी विधिसे बालककी मृत्यु हुई। अस्तु इसका अपराधी केवल प्रेमनाथ न्यायाधीश है। इसलिये वही प्राण दण्डका भागी है और कल उसे फाँसी दे दी जायगी।

प्रेम०—प्रधानजी! आपने यह दण्ड देकर मेरा बड़ा उपकार किया।

मन्त्री—कैसा उपकार?

प्रेम०—उपकार यही है कि जिस मित्रके बिना मैं भोजनतक नहीं करता था। आज मुझसे बिछुड़े हुए उसे एक सप्ताह समाप्त हो गया। न जाने कैसे २ कष्ट पाता होगा, अस्तु शीघ्र सेवामें जाकर अपना कर्तव्य पालन करूंगा।

(प्राणदण्डकी आज्ञा सुनकर सब बालक दुखी होते हैं। इसी भीड़को चीरते हुए स्वर्गीय बालकके पिताका रोते हुए प्रवेश।)

पिता—श्रीमान्! मैं एक प्रार्थना करना चाहता हूं।

मन्त्री—तुम कौन हो ?

पिता—(रोते हुए) महाराज ! मैं उस स्वर्गीय बालकका दुखी पिता हूं । मैं भलीभांति जानता हूं कि इन बच्चोंका कोई भी दोष नही । मेरा बेटा इन सब बालकोंका बड़ा प्यारा मित्र था ।

(सब बालक दुखी होते है । आंसू पोछनेका नाटय करते है)

फिर भला मैं कैसे कहूं कि जान बूझकर इस बच्चे ने उसके प्राण लिये है । मैं किस हृदयसे कहूं कि, आप इसे भी प्राण दण्ड दे दें ।

मन्त्री—तुम न कहो । किन्तु मैं तो कहता हूं । मेरी आत्मा भूल कर भी अन्याय नही कर सकती । छोड दो इस बालकको छोड दो ।

पिता—(रोते हुए) मैं नही छोड़ूंगा । अपने प्राणाधार बालकको कभी न छोड़ूंगा । हां यदि प्राण दण्ड दिया जायगा तो इसके पहिले यह बुड्ढा ब्राह्मण अपने प्राण छोडकर पहिलेही स्वर्ग चला जायगा (प्रेमनाथसे) बेटा ! बेटा !! तुम मुझे छोडकर कही न जाना ।

(करुणापूर्ण दृश्य देखकर राजाच न्द्रपीडका हृदय गद्गद होना और समीप आना । सबका खेद होना)

राजा—(दुखी पितासे) ब्राह्मणदेव ! तुम क्या चाहते हो ?

पिता—प्राणोंकी भिक्षा ।

राजा—किसके प्राणोंकी भिक्षा ?

पिता—(बालकका छातीसे लिपटाकर) इसके प्राणोंकी।

राजा—क्यो ?

पिता—इसलिये कि मेरा पुत्र अपने प्रिय मित्रोंके साथ अभिनय करते करते आनन्द पूर्वक स्वर्ग धाम चला गया। किन्तु यह दोष इसके मत्थे नही। केवल उसीके कर्मों का फल था। उसका यह अंतिम समय था जिसने उसकी जीवन लीला समाप्त कर अपने आञ्चलमें छिपा लिया।

राजा—अगर यह भिक्षा न मिले तो क्या करोगे ?

पिता—तो इसे प्राण दण्ड देनेके प्रथम मुझे फाँसीपर लटका दिया जाय।

राजा—तुम्हें क्यों ?

पिता—यों कि इन बालकोंको खेलनेकी आज्ञा देनेवाला अपराधी मैं ही हूं। मैंनेही कहा था कि कोई नया खेल खेलना और आकर मुझे बताना।

राजा—धन्य है ब्राह्मणदेवता तुम्हारी आत्मा, तुम्हारा हृदय तुम्हारा परोपकार धन्य है। जाओ हम इन सब बालकोंको छोडते हैं। (बालकोंसे) जाओ तुम सब कोई सुख पूर्वक अपने अपने घर जाओ।

(सब बालक और ब्राह्मण श्रीमान्‌की जय बोलते हुए जाते हैं। राजा तथा दरबारियोंका पुनः यथास्थान बैठना)

मन्त्री—(सरदारसे) सरदार साहब! दूसरे अपराधी उपस्थित करो।

सर०—(हाथ जोड़कर) प्रधानजी ! आज दो परदेशी चोरीके अपराधमें पकड़ कर लाये हैं।

मंत्री—क्या परदेशी और चोरीका अपराध ?

सर०—जीहां आज प्रातःकाल महलमें जो चोरी हुई है। वह माल उन्हीं चोरोंके पास मिला है।

राजा—क्या रात्रिकी चोरीका पता लग गया ?

सर०—(प्रणाम करके) हां महाराज ! मैंने स्वतः जाकर जङ्गलमें पकड़ा है।

राजा—तो क्या केवल दो ही चोर थे ?

सर०—जी हां केवल दो ही चोर। किन्तु उनकी निर्भीकता और चालाकी उनकी बात बातसे प्रकट होती है।

मन्त्री—अच्छा उन्हें भी दरबारमें उपस्थित करो।

(साधु और लीलावतीकी कमरमें रस्सी बांधे हुए दो सिपाहियोंका प्रवेश)

मन्त्री—इनको किसने पकड़ा ?

१ सिपाही—महाराज ! हमलोगोंने बहुत दूर जङ्गलमें दौड़ते दौड़ते जाकर पकड़ा है।

मन्त्री—ये लोग उस समय क्या करते थे ?

२ सिपाही—जब ये लोग दौड़ते दौड़ते थक गये और देखा कि अब किसी प्रकार नहीं बच सकते तो उसी जगह पर माल फेंलाकर सोनेका बहाना करके लेट गये।

श्रीकान्त— न्यायाधीश महाराज! यह झूठ कहता है।

२ सिपाही—महाराज! ये दोनो बड़े गहरे चोर हैं। खूब बहुत डाना जानते हैं। न जाने हमें क्या क्या कह चुके हैं।

मन्त्री—क्यों? तुम लोग राज कर्मचारियोंका सामना करते हो?

श्रीकान्त—महाराज! सत्य बातमें तो ईश्वरके सम्मुख भी नहीं डरना चाहिए। फिर ये तो मनुष्य हैं।

२ सिपाही—इसलिये मन्त्रीजी! अभीतक इनकी डर नहीं गयी।

मन्त्री—अच्छा पहले तुम दोनो व्यक्ति अपना अपना नाम और निवास स्थान बताओ।

साधु—मेरा नाम साधु और इसका नाम श्रीकान्त है। यह मेरा दामाद है। हम श्रीनगरके निवासी हैं। व्यापार की इच्छा से आप ही की राजधानीमें आ रहे थे।

मन्त्री—तो क्या चोरीका व्यापार करते?

साधु—मन्त्रीजी! हमने चोरी नहीं की।

मन्त्री—इसका प्रमाण!

श्रीकान्त—केवल ये सिपाही। जङ्गलमें हमारा साक्षी और कौन हो सकता है!

मन्त्री—और भी कोई साक्षी है?

श्रीकान्त—न्याय कारी परमात्मा! सत्यनारायण भगवान्!!

मन्त्री—माल तुम्हारे पास रखा था या नहीं?

श्रीका० —हम लोगोंके सोनेके पहिले यहां कुछ भी नहीं था किन्तु जब इन लोगोंने मुझे जगाया तो मैंने भी थोडी दूरपर यह धन रक्खा हुआ देखा।

मंत्री—तो तुम प्रत्यक्ष अपराधी हो। भला अपराध स्वीकार करनेमें क्या हानि है?

किया चोरी महलमें जा अजब व्यापार पाये हो।
किसीसे फिर न कुछ डरना कमाते खूब आये हो॥

श्रीका०—मन्त्रीजी! बारबार चोरीका लाछन लगाते आपको लज्जा नही आती? आपकी जिह्वा गिर नही जाती!

हम यहां परदेशमें किसको साक्षी दूं।
बताऊं मैं भला कैसे कि पागल या प्रमादी हूं।
हृदयको चीरकर देखो कि कैसा सत्य वादी हूं॥

मत्री— हां हां तुम्हारा सत्य वाद तुम्हारे चेहरेसे झलकता है! तुम्हारी बुद्धिमत्ताका प्रमाण तुम्हारी रग रगसे टपकता है।

करो मत व्यर्थकी बातें यहां तो न्याय शाला है।
सदा पापीके परिचयका, रहा करता उजाला है॥

श्रीका०—न तो यह न्याय शाला है न कोई न्याय वाला है।
प्रजाको लूट लेनेका यहां काफी मसाला है॥

मंत्री—मूर्ख बकवादी! तेरे साथ क्या अन्याय हो रहा है?

श्रीका०—इस समय जैसा न्याय हो रहा है मैं भलीभांति जानता हूं। यदि इसी प्रकारके मसालेसे तुमने काम लिया

होगा तो न जाने कितने निरापराधी मनुष्य तुम्हारे कारागारमें कष्ट भोगते होंगे। न जाने कितने सत्यवादी प्राण दण्ड पा चुके होंगे! मंत्रीजी! क्या आप जानते हैं कि इस भीषण अन्यायका म्लेच्छ रूपी पाप किसके सिरपर सवार होकर बोलेगा?

मंत्री—नहीं।

श्रीका०—(राजाकी ओर लक्ष्य करके) इनके सिरपर। जो आनन्द पूर्वक राजगद्दीपर बड़े बड़े हमारी बातें सुन कर भी मौन हैं। जिन्हें न्याय करनेका विचार नहीं। अन्याय देखते हुए भी बोलनेका अधिकार नहीं।

अगर यह अन्याय करना है अभी गर्दन उड़ा देखो।
दुखित छाती यह हाजिर है तुरत खञ्जर लगा देखो॥

राजा—(समीप आकर) मैं सब कुछ सुन रहा हूं और तुम्हारा अपराध तभी देखने देख रहा हूं। चुप चाप रहो। खबरदार! एक भी शब्द मुंहसे न निकलने पावे।

श्रीका०—नहीं तो क्या होगा?

राजा—बुरा होगा।

श्रीका०—मेरी समझमें भला होगा। मैं शीघ्र ही अखिल ब्रह्माण्ड नायक न्यायकारी परमात्माकी सेवामें उपस्थित हूंगा और यहां नहीं वहां हमारा न्याय होगा न्याय होगा न्याय होगा।

राजा—बस ले जाओ । पागलोंको कारागारमें बन्द करो
और इनका समस्त धन छीनकर राजकोषमें जमा करो ।

साधु—हे परमात्मा ! न्याय करना ।

(सिपाहियोंका धक्का देते हुए साधु और श्रीकान्तको ले
जाना । राजा और मंत्रीका क्रोधसे देखते रह जाना

(दवला पर्दे का गिरना ।)

षष्ठ दृश्य ।

पहलवान ।

(मार्ग—पडितसोभागचन्दका प्रवेश ।)
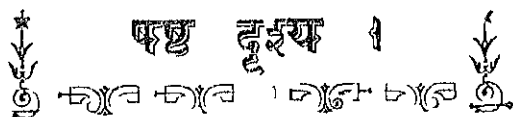
गायन ।

कर गई चकनाचूर चमककर चपल दामिनी ।
हो गये नयन निहाल निरखकर कुसुम गामिनी ॥
दो०—पापी मन माने नहीं लोभी नयन हसोड ।
प्राण लेत हैं रोककर देते भंडा फोड ॥ कर० ॥

जब मैंने बड़े बड़े वेद और शास्त्रके कई हजार श्लोकोंको अपनी ... मथानीसे मथ डाला तब यहीं दामि नी जसी कामि नीके ... यह अमूल्य और अलभ्य गायन प्राप्त हुआ है। इस गानेमें ऐसी अपूर्व और अलौकिक शक्ति है कि, अगर क ... फिरसे वह दामिनी दमक जाय तो यह प्रेमी पण्डित उसकी लपक तथा ... बेधड़क अपनी छातीपर सहन कर सके।
वाह रे बेदाम दामिनी ! वाह रे तेरा नया नखरा और वाहरे तेरी मोहिनी मूरत और गुलाबजामुन जैसा गाना।
(फिर गाना) 'कर गई चकनाचूर, चमककर चपल

दामिनी ' बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय । जो है सो ।

किन्तु श्रीमान् पण्डित सौभाग्यचन्द्रजी ! अब इस प्रकार सन्तोष करनेसे काम न चलेगा । इसलिये अब कोई दूसरा ढोंग रचाओ और अपनी नयन नुकीली, लचक ल जीली दामिनीको, छैल छबीले रङ्ग रसीले घनश्याम बनकर गले लगाओ ।

(सोचकर) बस, इसी वृक्षके नीचे योगीके भेषमें प्रसिद्ध ज्योतिषी बनकर बैठू । प्यारी दामिनी कभी तो इस रास्तेसे आयगी और मुझ ऐसे भोले भाले निष्कपट कथा वाचकका मन प्रसन्न करेगी । अच्छा मैं अभी भेष बदलकर आता हू । बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय । जो है सो ।

(सौभाग्यचन्दका जाना—दूसरी ओरसे फ शनदार कपड पहिने धन्नका प्रवेश)

मुझे पता मिल चुका है कि, गुरुजी दामिनीके वियोगमें अपना रहा सहा भ्रम भी छोडनेको तैयार हो गये हैं । जो गे उनकी डाट डपट तथा मार पीटके कारण उन्हें तिलाञ्जलि दे देना ही अच्छा है । ऐसे धूत गुरु और कथा वाचकको अगर कोई सीधा कर सकता है तो केवल हम जैसे दोनों चलते पुर्जे चेले ।

आजधुरन्धरको दामिनी बनाकर उनके ज्योतिष

शास्त्रकी पूरी परीक्षा करनी है। (नेपथ्यकी ओर पुकार कर) क्यो मित्र धुरन्धर!

(धुरन्धरका दामिनीके भषम प्रवश)

धुर०—कहो मित्र! देखो मैं ठीक दामिनी जान पडता हू कि नहीं?

धन्नू—(स्वगत) हाय हायरी मेरी दामिनी! (प्रकट) हा मित्र! इस समय तुम्हारा सुन्दर चेहरा देखकर मेरा मन लोट पोट होने लगा है। फिर तो गुरुजीकी न जाने क्या दशा होगी! भाई धुरन्धर! वहाँ पहुंचकर खूब नखरे दिखाना।

धुर०—हा हा तुम इसकी चिन्ता न करो। मगर आज दोनों को गुरुजी न पहचान सकेंगे।

(गुरु सौभाग्यचदका साधके भषमें प्रवश।)

सौभा०—तुम दोनो कौन हो?

धन्न—महाराज! हम दोनो यात्री हैं।

सौभा०—तुम्हारा नाम?

धन्नू—मेरा नाम बटा।

सौभा०—और इसका?

धन्नू—इसका नाम दामिनी है।

सौभा०—क्या दामिनी! बोलो सियावर रामचन्द्रजीकी जय! जो है सो। तुम दोनो कहा जा रहे हो?

धन्नू—महाराज! तीर्थ करने।

सौभा०—तीर्थ करने! तो क्या तुमने नहीं सुना है कि गङ्गाजीमें बडी भारी बाढ आ गई है? रास्ता बन्द हो गया है।

धञ्जू—महाराज! आपको कैसे मालूम?

सौभा०—मै अपने ज्योतिष शास्त्रके बलसे जानता हूं। मेरी आखोंसे गङ्गाजी साफ दिखाई पड़ती हैं। बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय! जो है सो।

धञ्ज—महाराज! हमारे गुरुजी भी तो दर्शन करने गये हैं।

सौभा०—तुम्हारा गुरु बिल्कुल मूर्ख है।

धञ्जू०—तो फिर महाराज! हमारा तीर्थ-व्रत कैसे पूर्ण होगा?

सौभा०—(स्वगत) अब इसको उल्लू बनाकर दामिनीको अपने जालमें फंसाना चाहिये। (प्रकट) मैं एक उपाय बताता हूं। उससे तुम दोनोकी मनोकामना पूर्ण हो जायगी।

धञ्जू—कैसा उपाय?

सौभा०—मैने एक भूत सिद्ध कर रक्खा है। वह मेरे कहनेपर तुम्हारे इच्छानुसार तीर्थों पर पहुचा देगा।

धञ्जू—जो आज्ञा। हम तैय्यार हैं।

सौभा०—बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय! जो है सो। मित्र! कहीं तुम दोनो उसे देखकर डर न जाओ। इसलिये सबसे उत्तम उपाय यही है कि बंधी प्रार्थना करो।

धञ्जू—बंधी प्रार्थना कैसी होती है?

सौभा०—आंखोंमे पट्टी और हाथोंमें रस्सी बांधकर प्रार्थना करनेको बंधी प्रार्थना कहते हैं।

धञ्जू—जो आज्ञा।

(दोनोके हाथ बांधकर आखोमे पट्टी बांधना)

बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय जो है सो। देखो ! सम्हल कर बैठना। भूत आ रहा है।

(पण्डितका आवाज बदलकर भूतके बदले बोलना)

बेटा ! मैं जानता हूं कि तुम बड़े पापी हो। इसीलिये तीर्थ करने जा रहे हो।

धन्नू—नहीं भूत जी ! मैं पुण्य इकट्ठा करने जा रहा हूं।

सौभा०—देखो मुझसे झूठ न बोलना। नहीं तो कच्चा चबा जाऊंगा।

धन्नू—कच्चा चबा ना हो तो, मेरे गुरु सौभाग्यचन्द्रको खा जाना।

सौभा०—(स्वगत) है यह तो मेरा चेला जान पड़ता है। यह दामिनीको कैसे उड़ा लाया। तब तो इसे और भी तंग करना चाहिये। (प्रकट) नहीं नहीं, मैं तेरे गुरुको नहीं खाऊंगा। तुझे या तेरी दामिनीको चबा जाऊंगा

दामिनी—(नखरेसे) धन्य हैं भूतजी ! मैंने आपका क्या बिगाड़ा है ?

धन्नू—(नम्रतासे) अरे नहीं भूतजी ! हम दोनोंको छोड़ दो (चिल्लाकर) अरे दौड़िये। ज्योतिषीजी ! हमारी तीर्थ यात्रा समाप्त हो गई ! देखिये, देखिये साक्षात् गयाजीका अभिनय हो रहा है।

सौभा०—तुम्हारे ज्योतषीजी तो भग गये।

धन्नू—हाय ! हाय !! तो क्या करूं ?

सौभा०—अभी मेरे कहने पर बच सकते हो !

अनू—(रोनेका नाट्य करके) बचाइये बचाइये भूतजी! इस वक्त आपही हमारे ज्योतिषी तथा गुरु हैं।

सौभा०—अच्छा, मेरे कहनेपर इस दामिनीको ज्योतिषीजीको दे डालो। तब तुम्हारा पिंड छोड़ूंगा।

अनू—अच्छा महाराज! मैंने देनेका वचन दिया।

सौभा०—(स्वगत) बोलो सियावर रामचन्द्रजीकी जय! जो है सो! आइये ज्योतिषीजी! अपनी दामिनीको सम्हालिये।

(सौभाग्यचन्द्रका भूतकी आवाज बदल कर पुनः पूर्ववत ज्योतिषीकी भांति बोलना।)

सौभा०—(दामिनीसे) प्यारी!

दामिनी—(नखरेसे) प्यारे!

सौभा०—बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय जो है सो। दामिनी! क्या तू मुझे प्यार न करोगी?

दामिनी—करूंगी।

सौभा०—मेरे घर चलोगी?

दामिनी—चलूंगी।

सौभा०—रोटी बनाओगी?

दामिनी—बनाऊंगी।

सौभा०—सेवा करोगी?

दामिनी—करूंगी।

सौभा०—और गले लगावोगी?

दामिनी—लगाऊंगी।

सौभा०—बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय ! जो है सो ।

(शशिधरका प्रवेश)

शशि०—अरे तू कैसा निर्दयी साधू है ? दोनोंके हाथ और आंखें बांधकर प्राण हत्या करना चाहता है ।

सौभा०—नहीं महाराज ! ये मेरी स्त्री दामिनी, शशिधर पंडितकी लड़की है और यह मेरा नौकर है । दोनोंको आज्ञा न मानने पर ऐसी सजा दे रहा हूं ।

शशि०—दामिनी तो मेरी लड़की है, मेराही नाम शशिधर पंडित है । तू जटाधारी मेरा दामाद कहांसे आया ?

सौभा०—तो फिर ये कौन है ?

(शशिधरका पहिले धनंजयकी रस्सी और पट्टी खोलना । फिर धुरंधरकी रस्सी और पट्टी खोलना ।)

शशि०—(पहिचानकर) अरे, यह तो सौभाग्यचन्द्रका चेला धनंजय विद्यार्थी है ।

धुर०—(घूंघट खोलकर) और मैं दूसरा चेला धुरन्धर हूं ।

सौभा०—(दाढ़ी मूंछ खोलकर) और मैं दोनोंका गुरु सौभाग्यचन्द्र हूं । बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय ! जो है सो

शशि—धनेरी दुनियाकी !

धुर०—चतुर्थो अध्याय समाप्तम्

(सबका प्रस्थान ।)

सप्तम दृश्य।
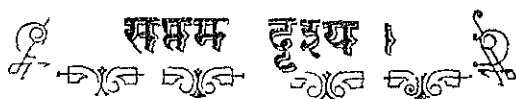
स्थान—साधु वैश्यका गृह।

(लीलावतीका कलावतीको खोजते हुए प्रवेश।

लीला०—बेटी कलावती! ऐ बेटी कलावती! (चारों ओर देख कर) हैं, कलावती कहां चली गई! (नैपथ्यकी ओर देखकर) अरे! तू इतनी निडर हो गई! अपने मनका काम करने लगी! अच्छा, आने दे अपने पिताको तेरे सब गुण कहूंगी।

एक पड़ोसिनका प्रवेश।

पड़ो०—क्या करती हो कलावतीकी मा! किसपर अपना क्रोध प्रकट कर रही हो?

लीला०—देखो पड़ोसिनजी! एक तो धर्म चोरी भी हो गए। खानेको दाना नहीं जैसे तैसे दिन बिता रही हूं। दूसरे कलावती ज्यों ज्यों बड़ी होती जा रही है त्यों त्यों अपने मनकी होती जा रही है। एक तो खाने पीनेका दुःख। दूसरे कलावतीके दिन भर घूमने फिरनेका दुःख।

पड़ो०—नहीं नहीं सेठाइनजी! ऐसा न कहो। ईश्वर ने तुम्हें ऐसी सुशीला पुत्री देकर घरका मुखोज्ज्वल कर दिया है।

लीला०—यह सब तुम चार सयानी वृद्धा स्त्रियोंका प्रताप है। (आंचल पसारकर पाँव पड़ना।) भगवान् उसे सुखी रक्खे।

पड़ो०—भगवान‍्ने उसका विवाह भी कर दिया। तुम्हारी सब चिन्ता मिट गई। अब थोड़े ही दिनोंमें नाती खिलानेकी घड़ी आ रही है। पण्डिताइनजी! तुम्हें बड़ा सुन्दर और योग्य दामाद मिला है।

लीला०—यह सब ईश्वरकी कृपा है। यह लीला वेही जानें।

पड़ो०—(नेपथ्यकी ओर देखकर) वह देखो! सामनेसे कलावती हाथमें कोई वस्तु लिये आ रही है। आओ, छिपकर इसका भेद जाननेका प्रयत्न करें।

(दोनोंका छिपना। एक ओरसे कलावतीका हाथमें सत्यनारायणकी कथाका प्रसाद लिये प्रवेश।)

गायन।

बियोगिनकी दया करके प्रभूजी! लाज तुम रखना।
सदा चरणोंकी सेवामें मुझे महाराज! तुम रखना।
गये परदेश जीवन धन पिता भी साथमें उनके।
रहें जिस ठौर वे दोनो, सुखोंसे साज तुम रखना।
अगर फंस जाय विपदामें घिरें दुष्टोंके घेरेमें।
डरें नहिं भूलकर मनमें, बना मृगराज तुम रखना।
अगर कुछ भूल हो मुझसे, कभी पति भक्ति-पूजा में।
मुझे तुम दण्ड दे देना, उन्हें नाराज मत रखना।

हे भगवान्! आज मैं माताकी आज्ञाके बिना आपकी कथा सुनने चली गई। अस्तु कहीं माताजी रुष्ट न हो जाय मुझे यही चिन्ता है।

लीला०—(प्रकट होकर) चिन्ता है तो क्या पूछकर जानेमें लाज लगती थी?

(कलावतीका लज्जावश सिर नीचे करके बात सुनना और प्रसाद छिपा लेना।)

कला०—(हाथ जोड़कर) माताजी! भूल हुई क्षमा करिये।

लीला०—(क्रोधकर) बस रोज मनमाना घूम फिर आया करो और क्षमा माग लिया करो। यह नहीं सोचती कि संसार क्या कहेगा?

पड़ो०—पण्डिताइनजी! हो चुका। सयानी लड़कीको इतना डाटना डपटना अधिक है। ऐसा नहो कि फिर तुम्हारी आज्ञा भी न माने।

लीला०—अब कहा न मानेगी तो प्राण ले लूंगी और अपना भी प्राण दे दूंगी। (कलावतीके पास जाकर) बोल बोल कहा गई थी?

कला०—माताजी! अलख अगोचर दीनानाथ भगवान्की सेवा में संसारका पालन पोषण करनेवाले, करुणासागरके दर्शनके लिये।

लीला०—(चिढ़ाकर) तेरे दीनानाथ करुणासागर कहा हैं! किसके घर आये हैं?

कला०—अपने पड़ोसी साधेलालके घरमें। वहां पड़ोसकी तमाम स्त्रियोंको जाते देखकर मैं भी चली गई। अन्तमें कथा सुनकर और प्रसाद लेकर शीघ्र घर चली आई।

सुन्दर अद्भुत थी बनी, झांकी झांकी साज।
बड़े प्रेमसे हो गई कथा अनोखी आज॥

लीला०—उस भीड़में तूने क्या क्या देखा?

कला०—एक अत्यन्त ऊंचे और सुन्दर सिंहासनपर श्रीठाकुरजी महाराज विराजमान थे। उनके चारो ओर सुगन्धित पुष्पोंकी माला और तुलसीदल ढङ्गके साथ, सजाया गया था। उनका दिव्यरूप देखनेसे मेरा हृदय आनन्द सागरमें गोते खा रहा है।

अलौकिक छवि बनी सुन्दर अनोखा काम न्यारा है।
अजब है शक्ति आखोंमें, अधमको मोक्ष तारा है॥

लीला०—बेटी! तूने क्या शिक्षा प्राप्त की?

कला०—माताजी! जो प्रेमपूर्वक उनकी कथा सुनते हैं उनके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। लीजिये, माताजी! श्री ठाकुरजीका प्रसाद।

लीला०—(प्रसाद लेकर) हे परमात्मा! मेरे स्वामी और जामाता सकुशल शीघ्र लौट आवें तो मैं भी आपकी कथा श्रवण करूंगी।

(कलावतीसे) धन्य है तेरी ईश्वर भक्ति और अतुल प्रेम देखकर मेरा हृदय गद्गद हो रहा है।

वास्तवमें तेरीही जसी भक्तिपरायणा कन्याओंसे "माता की गोदी सुफल होती है ।

पडो०—कहो, अब बच्चीकी करतूत पर कैसी प्रसन्न हो रही हो ?

लीला०—पडोसिनजी ! यह माताका हृदय है, जो सन्तानकी ममतासे कभी विरक्त नहीं हो सकता। अपनी एक मात्र कन्याका पवित्र अन्तःकरण देखकर, ईश्वरसे यही वर माँगती हूं कि, हे ईश्वर ! इसीप्रकार सबको योग्य कन्या प्रदान करना ।

पडो०—मैं भी यही चाहती हूं ।

(सबका प्रस्थान । भगवान्‌का प्रवेश ।)

संसारके समस्त प्राणी किसी न किसी रूपसे मेरा स्मरण करते है। मुझे संसारके प्राणियोंके अतिरिक्त भक्तोंका भी ध्यान रखना पडता है।

इतना ही नहीं बल्कि अपने भक्तकी सेवामें सद्य स्थान स्थान पर दौडना पडता है।

बेचारी कलावती माताका भय रखते हुए भी मेरी आराधनाके कारण कथा सुननेके लिये जगह जगह पर जा पहुंचती है। वह चाहती है कि परदेश गये हुए मेरे पिता और पति दोनों सुखसे रहें। अभी माता और कन्याको कुछ भी पता नहीं कि वे दोनो कारागारमें बन्द हैं। साधुके बारबार झूंठ बोलनेका यह फल हुआ कि, दामाद सहित कारागार जाना

पडा और इधर उसका साथी था। चोरी चला गया। मेरी इच्छा है यह समाचार पहुंचनेके प्रथम अन्यायी राजा को स्वप्नमें भय दिखाकर ससुर दामादको दण्डमुक्त कर

भक्तको दुःख एक हो तो वह मुझे सौ बार है।
दुःख हरनेके लिये तो मेरा हुआ अवतार है॥

गायन।

तैयार हूं मैं तो हमेशा काम करनेके लिये।
है सुदर्शन भी सहायक, आज दीनोंके लिये॥
फूट पडती अश्रुधारा हो विकल मेरा हृदय।
अब कहे दाता मुझे वे, चार दानेके लिये॥
मैं नियमका वज्र बंधन तोड सकता हूं नहीं।
इसलिये दुख भोगते थे, सुक्ख पानेके लिये॥
पर जहां तक शक्ति मेरी है पहुंच जिस ठौर तक।
हर घडी चिन्ता लगी है कष्ट हरनेके लिये॥
दुःख पायेंगे कठिन वे भूलते भक्त यदि।
सो रहे हैं तान चादर मौज करनेके लिये॥

(प्रस्थान)

अष्टम दृश्य ।
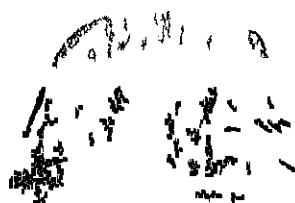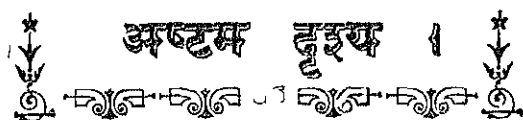
स्थान – शयनगृह ।

(एक पलङ्गपर राजा व ध्रुवकेतु गद्दी लगाये और दुशाला ओढ बैठे हैं । मन्त्रीसे साधु और श्रीकान्तका समाचार पूछ रहे हैं ।)

राजा—मन्त्रीजी ! फिर तो उन दोनों उद्दंड चोरोंने कुछ अपराध नहीं किया ?

मन्त्री—महाराज ! उन दोनोंने अब भोजन करना त्याग दिया है । सत्याग्रह धारण कर लिया है ।

राजा—(हंसकर) प्रधानजी ! आप भी बडे भोले हैं । अभी, उन्हें भूख न लगी होगी । वे आनन्दसे विश्राम करते होंगे ।

मन्त्री—नहीं महाराज ! भोजन देते समय उन दोनोंने ललकार कर कहा कि, हम ऐसे अन्यायी और अत्याचारी राजाके राज्यका अन्न तक नहीं ग्रहण करेंगे ।

राजा—(आश्चर्यसे) क्या ऐसा कह डाला !

मन्त्री—जी हाँ ।

राजा—अच्छा, इस समय जाओ, तुम भी विश्राम करो मैं प्रातःकाल उनका सत्याग्रह देखूंगा ।

(मन्त्रीका प्रणाम् करके जाना)

६

राजा (स्वगत) यदि उनका सत्याग्रह ठीक होगा तब तो कोई चिन्ता नहीं। नहीं तो उन्हें और भी कठिन दु ख भोगना पड़ेगा

(राजाका तकियेके सहारे लेटना और नींद आ जानेपर स्वप्न देखना (स्वप्न दृश्य) दृश्य परिवर्त्तन होना। कारागारमें दोनों अभियुक्तोंके पास भगवान्का आना और राजाका इस भावकी कड़ी आज्ञा देना कि— इन दोनोंको प्रात काल होते ही दण्ड मुक्त करो। नहीं तो तुम्हें अधिक दु ख भोगना पड़ेगा। राजाका स्वप्नकी दशामें भगवान्के पास जाकर क्षमा मांगना और लौटकर अपने पलङ्गपर लेटना।

(स्वप्न दृश्य समाप्त) प्रातकाल राजाकी निद्रा भङ्ग होना और आश्चर्य करना।)

राजा—(घबराते हुए) मैंने यह क्या अद्भुत स्वप्न देखा? स्वय साक्षात् भगवान्! उनके छोड़देनेके लिये आदेश करते हैं। यह क्या रहस्य है? सचमुच वे दोनों व्यक्ति अपराधी नहीं हरिभक्त हैं। (ऊपरकी ओर देखकर) भूल हुई भगवन्! मुझसे बड़ी भारी भूल हुई। मैं अभी दोनों सज्जनाको सम्मान पूर्वक दण्डमुक्तकर अपने भूलकी क्षमा मांगता हूं (पुकार कर) पहरेदार!

(पहरदारका प्रवेश प्रणाम करना)

जाओ, प्रधानजीसे कहो कि—'दोनों सत्याग्रही अपराधियोंको दण्ड मुक्त कर मेरे सम्मुख शीघ्र उपस्थित करें। मनमें कुछ भी सकोच न करें।

पह०—जो आज्ञा।

(प्रणाम करके पहरेदारका प्रस्थान। दूसरी ओरसे राजगुरुका प्रवेश)

ग —(टवक) गुरु महाराजके चरणोंमें सेवकका सादर प्रणाम!
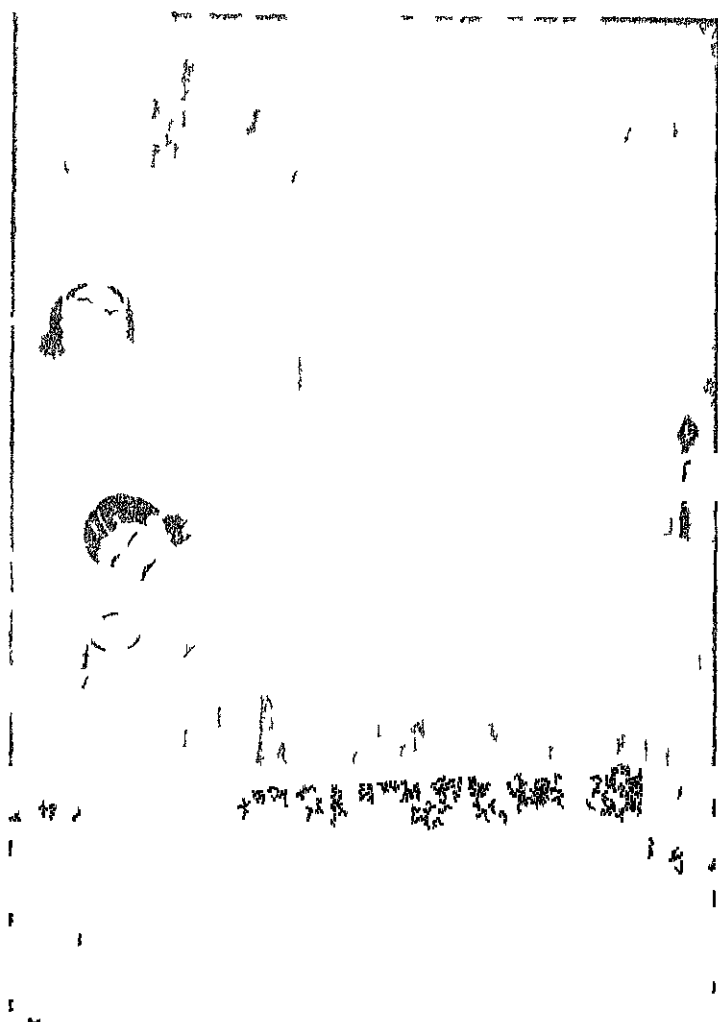
गुरु—राजन्! कल्याण हो। सदा सुखी रहो।

राजा—महाराज! आज प्रातःकाल पधारनेका क्या कारण है?

गुरु—राजन्! मुझे रातभर निद्रा नहीं आई। चिन्ता लगी रही कि, वे दोनों बदमाश चोर कहीं उपद्रव न कर बैठे।

राजा—महाराज! वे चोर नहीं। कुलीन और हरि भक्त हैं। उनका यथार्थ अनुसन्धान न कर मैंने बडी भारी भूलकी।

गुरु—तुम्हें यह पता कैसे लगा?

राजा—आज स्वप्नमें स्वयं भगवान् उनके छोडनेका आदेश कर गये है।

गुरु—अरे! कहीं उन्ही दुष्टोंने कोई षडयन्त्र तो नहीं रचा?

राजा—नहीं महाराज! मैं यथार्थ कहता हूं।

गुरु—तब तो अवश्य वे लोग कोई भक्ति-प्रधान प्रतिभा शाली पुरुष हैं। छोडो छोडो राजन्! ऐसे पुरुषोंको मुक्त कर सम्मान पूर्वक बिदा करो।

राजा—हां, गुरुजी! मैंने भी यही विचार किया है।

गुरु—अच्छा मैं उनके सम्मानार्थ अपने मनकी सामग्री कोषसे लिवा लाता हूं।

(राजगुरुका प्रस्थान दूसरी ओरसे मंत्रीके साथ दोनों कैदियोंका प्रवेश)

राजा—(पहरेदारसे) पहरेदार! इनकी हथकडी और बेडी पृथक करो।

श्रीकान्त—कहिये, श्रीमान्! अब किस भीषण दण्डके जालमें फासनेके लिये तयार किये जा रहे हैं?

राजा—श्रीकान्त ! तुम दोनो दड भोग चुके। अब सुख भोगनेके लिये तैयार किये जा रहे हो !

(बेडियोसे मुक्त होना साधुका प्रसन्न होकर आतुरतासे पूछना)

साधु—(आश्चर्यसे) हैं ! सुखभोग !!सत्य कहिये, श्रीमान् ! आपने हमें निरपराधी कैसे जान लिया ?

राजा—साधुजी ! मुझे अधिक लज्जित न करो। वास्तवमें तुम्हारे निष्कपट और शुद्ध हृदयको मैंने पहिले नहीं पहिचाना था। केवल तुम्हारी बातोंसे चिढकर जान बूझकर बन्दी बनाया। भक्तवर ! मुझे क्षमा करो।

(राज गुरुका कुछ ब्राह्मणोंके साथ थाल सजाये प्रवेश।

साधु—क्षमा ! एक राजाको दीनप्राणी क्या क्षमा दे सकता है?

राजा—साधुजी ! राजा और प्रजाका तो नाममात्रका सम्बन्ध है किन्तु यदि राजामें न्याय करने योग्य गुण न हुए तो फिर वह राजा कैसे माना जा सकता है ? भक्तवर ! अब तुम हर्षपूर्वक हमारा सम्मान स्वीकार करो।

हमको क्षमा कर दीजिये अब आप सच्चे प्रेमसे।
यह रत्न माला और धन भी लीजिये सब प्रेमसे॥

(राजाका साधु और श्रीकान्तको एक एक रत्नकी माला पहिनाना और रत्नसे भरा थाल देना। आकाशमें नगारेकि बजनेका शब्द होना। पुष्प वर्षा छाया भगवान्का दिव्य प्रकाश)

ड्राप।

स्थान—नदीका किनारा

(भगवानूका प्रवेश)

क्या कथाका अर्थ है? कैसा सुखद उपदेश है?
क्या मर्म इसमें है छिपा कैसा भला आदेश है?

भला साधु और श्रीकान्तको क्या पता कि, केवल एक कलावतीकी भक्तिके प्रतापसे हम कारागारसे मुक्त हुए और उसीके भाग्यसे आज नाव भर द्रव्य पाकर घर जा रहे हैं। मेरी इच्छा है कि, ऐसे शुभ अवसर पर एक बार सन्यासीके भेषमें इनके उदारताकी परीक्षा करू। अपनी लीला द्वारा इनके हृदयकी मलिन वासनाका संहार करू और प्रेमका पाठ पढाकर इनका उद्धार करू।

गायन।

प्रेम है अब मेरा आधार।
प्रेम भरासे मैं यह लीला करता हु हरबार।
इसी प्रेममें जगत लुभाना भेद भाव अनुसार ॥१॥

शास्त्रका भी शस्त्र प्रेम है, बिना प्रेम संहार।
सत्य प्रेम वह क्या पहिचाने, जो है मूर्ख गवार ॥२॥
भाव शुद्ध हो मन पावन हो निर्मल होय विचार।
उसकी सेवा करु दौड़कर प्रतिदिन बारम्बार ॥३॥
जहां परस्पर प्रेम सरोवर तहां न अत्याचार।
कर्महीन नर प्रेम त्यागके भये भूमिके भार ॥४॥

(प्रस्थान। नदीके उसपार नगरसे आती हुई नावका दिखाई पड़ना धीरे धीरे आकर नावका किनारे लगना।)

साधु—श्रीकान्तजी! हमलोग निर्विघ्न किनारे पहुंच गये। अब कोई चिन्ता नहीं। मुझे निद्रा भी अधिक सता रही है परिश्रम भी अधिक करना पड़ा है। अस्तु विश्राम करके तब घर चलेंगे।

श्रीका०—जो आपकी इच्छा किन्तु लाइये मैं आपकी चरण सेवा कर दूं तो थकावट दूर हो जायगी।

साधु—देखो मल्लाह! नावकी भलीभांति देखभाल करना कोई वस्तु गड़बड़ न होने पावे।

मल्लाह—जो आज्ञा साहुजी।

(साधुका विश्रामके लिये उद्यत होना। भगवान्का सन्यासी भेषमें प्रवेश)

भग०—नारायण हरी।

साधु—महाराज! नारायण हरीका क्या अर्थ है? मैं नहीं समझा।

भग०—मुझे भोजनकी इच्छा है।

साधु—महाराज ! यहा नगरके बाहर नावमें भोजनके लिये क्या रक्खा है ?

भग०—क्या तुम्हारी नाव में कुछ भी नहीं ?

साधु—नहीं महाराज इसमें तो लत्ता पत्ता लदा हुआ है।

भग० —तथास्तु। जो इच्छा

(मल्लाहकी ओर कमण्डल दिखाकर नारायण हरी)

मल्लाह—(लड्डुओंकी पोटली छिपाकर) महाराज ! मेरे पास तो कुछ नहीं। नहीं तो मैं आपको भूखा न लौटाता।

भग०—तो इस पोटलीमें क्या है ?

मल्लाह—(स्वगत) इसमें तो लड्डू हैं। भला इन्हें दे दू तो फिर मैं क्या खाऊंगा ? (प्रकट) महाराज ! इस पोटलीमें तो श्रीगङ्गाजीकी सुन्दर बालू बंधी है। फाकना हो तो ले लीजिये।

भग० —एवमस्तु। मैं बालू क्या करूंगा !

(भगवान्‌का प्रस्थान। नावका धन लत्ता पत्ता रूपमें होना नावका हल्की होकर जलके धरातलसे उठ आना मल्लाहका देखकर आश्चर्य करना)

मल्लाह—साहुजी ! साहुजी !! मेरी नाव हलकी क्यों हो गई ?

साधु— (घबड़ाकर) अरे ! देख उसमें मेरा माल असबाब तो ठीक है ?

(मल्लाहका कपड़ा उठाकर देखना घास पात देखना और घबड़ाना

मल्लाह—साहुजी ! इसमें तो सिवाय घास पत्तेके कुछ भी

नहीं है। आपका धन कहा गया? और इसे कौन रख गया? (घास हाथमें लेकर)

साधु—क्या घास पात! अच्छा अब मै समझा। यह सब सन्यासीकी करामात है। वह सन्यासी नहीं बल्कि कोई तपोनिष्ठ महात्मा या स्वयं भगवान् थे। हाय, हाय मैं उनसे झूठ क्यों बोला?

(पछताकर बैठजाना)

मल्लाह—जब यही बात है तो ठहरिये, मैं भी अपने लड्डू देखलू ।

(मल्लाहका अपनी पोटली खोलना)

श्रीकान्त—अरे! तुझे तो लड्डुओंकी चिन्ता है। यहा लाखोंमें पानी पड गया।

मल्लाह—(दुखी होकर) साहुजी! मैंने भी लड्डुओंको बालू बता दिया था। देखिये! सचमुच ये बालू हो गये। साहुजी! वास्तवमें वह कोई जादूगर या भगवानही हैं।

श्रीकान्त—तो एकबार उन्हे ढूढना चाहिये। वे बहुत दूर नहीं गये होंगे।

साधु—अच्छा, तुम यहीं ठहरो। मैं दौडकर देखू। ठीक है अभी मिल सकते हैं।

(साधुका दौडकर जाना। मल्लाह और श्रीकान्तक देखते रहजाना। पर्दे का गिरना)

द्वितीय दृश्य।

स्थान— वनमार्ग

(भगवान्‌का मन्यासीके भेषमें प्रवेश)

माया संसारमें कैसी अनोखी वस्तु है ? इसके मोहमें पड़कर मनुष्य कर्म धर्म और दान पुण्य तक भूल जाता है। चाहे सारा धन आगसे जलकर पानीमें डूबकर और चोर डाकुओं द्वारा लूटा जाकर नष्ट हो जाय किन्तु उस धनका थोड़ा सा हिस्सा किसी उत्तम कार्यमें लगा देना लाभदायक नहीं समझता।

ठीक यही दशा साधुकी है। इसने अपने जीवनमें सैकड़ों खेल खेले। उसी प्रकार अब माया भी उसे भांति भांतिके खेल खिला रही है।

गायन।

यह जग है मायाका मन्दिर ना कुछ ठौर ठिकाना है।
बने हुये हैं द्वार अनेकों अन्धकार भी छाया है॥
भटकत फिरे करोड़ों प्राणी पार न अब तक पाया है॥
मन विरथा भटकाना है॥ १॥
मध्यभागमें ज्योति विराजी दिव्य प्रकाश दिखाता है॥

मर्म न जाने कोई उसका, देख देख फिर आता है ॥
सब सन्तोष खजाना है ॥ २ ॥
ज्ञान कसौटी उत्तम होवे पारख श्रेष्ठ निराला हो ।
अति विचित्र यह मोक्ष समस्या अथ बताने वाला हो ॥
सच्चा रूप दिखाना है ॥ ३ ॥

अच्छा इस रमणीक स्थानपर बैठकर प्राकृतिक छटाका दर्शन करना चाहिये ।

(भगवान्‌का एक स्थान पर बैठना साधका घबड़ाते हुये, प्रवेश सन्यासीको देखकर चरणोंमें गिरना)

साधु—महाराज ! महाराज !! क्षमा । मैं आपकी शरण हूं । पाहिमाम् पाहिमाम् ।

भग०—भाई ! यह क्या करते हो ? मेरे पांव क्यों पड़ते हो तुम कौनहो ? मुझे क्यों सता रहे हो ?

साधु—महाराज ! मैं आपकी महिमा नही पहिचान सका । मैं वही अज्ञानी अन्धा साधु हूं । जिसके पास अभी जाकर आपने भोजन मांगा था ।

भग० तो क्या भोजन मांगना भी अपराध है ?

साधु—नही (आंसू पोछकर) किन्तु शाप दे देना तो पाप है ।
हजारों आजकल साधू इसी मायामें फिरते हैं ।
मिले यदि भक्त कुछ भोला गला सीधा पकड़ते हैं ॥

भग० —(हंसते हुए) तो मैंने तुम्हें क्या शाप दिया ? क्या झूठा कलंक लगाते हो ?

समझता था तुम्हें निष्ठुर मगर पागल भी पूरे हो।
चतुरता कर रहे पूरी समझमें कुछ अधूरे हो ॥

साधु—वाह महाराज ! वाह। मेरा सारा धन नष्टहो गया और उल्टा मैंही पागल हो गया।

छिपाऊंगा नहीं मुंह मैं करूंगा क्या भवन जाकर।
मिलेगा धन नहीं जबतक मरूंगा मैं जहर खाकर ॥

भग—तुम्हारा धूल है सब धन न ठठरीका ठिकाना है।
न कोई साथ आवेगा न धन भी साथ जाना है।
साधुजी ! तुम्हारा रोना वृथा है। हां यह बात अवश्य है कि तुमने मेरी अवज्ञाकी। मुझभूखेको निराश लौटाया। संभव है कि इसी लिये दुःख पाया हो।

साधु—महाराज ! अब मैं ऐसी भूल कभी न करूंगा। मेरा अपराध क्षमा हो। मेरी प्रार्थना पर ध्यान दिया जाय !

(साधूका पुनः पैरोंपर गिरना)

भग०—अच्छा उठो उठो तुम क्या चाहते हो ?

साधु—महाराज ! मेरा सारा धन मिल जाय और मैं जैसा पहिले धनी था वैसाही अब भी होजाऊं।

भग०—एवमस्तु।

(साधुका पैरोंपर गिरना भगवान्का अन्तर्द्धान होना)।

साधु—जयहो महाराज ! आपकी जयहो।

(साधुका उठकर देखना सन्यासीको न देखना और आश्चर्य करना)

तृतीय दृश्य।

स्थान—साधुका गृह

(लीलावतीका एक लोटा जल लिये प्रवेश)

लीला०—(पुकार कर) बेटी कलावती !

कला०—(आकर) माताजी ! क्या आज्ञा है ?

लीला०—बेटी ! तू स्नानकर चुकी या नहीं ?

कला०—स्नान कर चुकी हूं। श्रीठाकुरजीके लिये तुलसी दल और पुष्प चुन रही हूं और पूजाकी सामग्री तैयार कर रही हूं।

लीला०—अच्छा श्रीठाकुरजीको यहीं ले आ और पूजाकी सामग्री भी उठा ला।

(कलावतीका ठाकुरजीको लेने जाना। लीलावतीका जल सींचकर भूमि पवित्र करना। कलावतीका ठाकुरजीको लाना। स्थान पर शेष सामग्री लाना। ठाकुरजीको पुष्पसे सजाना और प्रेमसे दोनोका गाना)

गायन।

दोनो—मेरे श्रीठाकुरजी महाराज ! आज तुम रखियो मेरी लाज।

लीला०—तुम्हें गुलाबका पुष्प चढाऊं।

कला०—चम्पा, जूही हार पिन्हाऊं।

दोनो—बनाया फूलोंका यह साज। आज०।

लीला०—जगके पालन हार तुम्हीं हो ।

कला०—मेरे भी सरकार तुम्हीं हो ॥

दोनो—बनाओ दीननके प्रभु ! काज । आज० ॥

(पुष्प चढा चकनेपर एक बालकका प्रवेश ।)

बालक—सेठानीजी ! क्या कर रही हो ?

लीला०—बेटा ! भगवान्‌की पूजा कर रही हू ।

बालक—पूजा कितनी देरमें समाप्त हो जायगी ?

लीला०—क्यो ! तुझे इससे क्या प्रयोजन ?

बालक—मेरा विचार है कि, आज पूजन समाप्त होने पर आपको एक हर्ष समाचार सुनाऊ और खूब प्रसाद खाऊ ।

लीला०—हा हाँ क्या समाचार है ? शीघ्र बता । मैं तुझे मुह मागा प्रसाद दू गी ।

बालक—नही नहीं । पहिले मुझे प्रसाद दे दो तब बताऊ गा ।

लीला०—अच्छा ठहर ठहर मैं अभी लिये आती हू । (प्रस्थान)

कला०—भाई ! क्या तुम मुझे वह समाचार नही बता सकते ?

बालक—नही नही । मैं केवल तुम्हारी माताको बताऊ गा ।

(लीलावतीका प्रसाद लिये प्रवेश)

लीला०—ले बेटा ! प्रसाद (लडकेका प्रसाद लेना) हा, अब बता क्या समाचार है ?

बालक—कलावतीके पिता और हमारे मित्र श्रीकान्तजी दोनों एक नावपर बहुतसी सामग्री लादे हुये आये हैं । मैं

स्नान करने गया था। उन्होंने मुझे आपके पास समा
चार देनेके लिये भेजा है।

लीला०— (प्रसन्न होकर) बेटी कलावती ! तू यहीं रहना और
ठाकुरजी की पूजा करना। मैं जाती हू सब सामग्री
लिवालाऊ ।

(बालकके साथ लीलावतीका प्रस्थान)

कला०— (ठाकुरजीके पास जाकर) धन्य हैं प्रभु ! आपने मेरी
प्रार्थना सुन ली। (स्वगत) किन्तु मैं यहा कैसे रहू कहा
मेरे पतिदेव यह न सोचें कि 'मेरे आनेका समाचार पा
कर क्यों नहीं आई।' अस्तु, मैं भी चलू । ठाकुरजीका
पूजन लौटकर करू गी।

(ठाकुरजी तथा समस्त सामग्री भीतर ले जाना। दूसरी
ओरसे भगवान्‌का प्रवेश)

आज कलावतीने अपने पति तथा पिताके आगमन की
सूचना पाकर मेरा पूजन बन्द कर दिया। यह भी प्रेम
का निराला मार्ग है किन्तु कलावतीने यह अच्छा काम
नहीं किया। इसलिये आज अपने भक्तका नाम अमर
करनेके लिये चेतावनी स्वरूप एक लीला रचू और इस
घटनासे संसारका कल्याण करू ।

हा पुजारी प्रेमका-सबका यही अधिकार है।
भक्ति मनभर लूटलो-मेरा खुला भण्डार है॥

गायन ।

छीनलिया बलसे भक्तोने जो कुछ मेरा मन धन था ।
उनका हृदय है मेरा मन्दिर ।
मैं हु सदा सेवामें हाजिर ॥
मेरा नाम भक्त जन अच्छा वृथा नाम मनमोहन था ।
दाता और विधाता जो हे ।
कहनेको यह तन भी दी है ॥
अब तो केवल एक बदन है पहिले नीरस जीवन था ।
दो०—क्रम क्रमसे फूलाकरे ज्यो गुलाबका फूल ।
उसी भांति मेरा हृदय रहे प्रेममें फूल ॥

(प्रस्थान)

चतुर्थ दृश्य ।
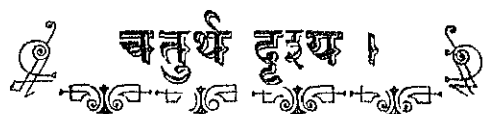
स्थान—नदीका तट ।

(साधु और श्रीकान्तका एक स्थानपर नावके पास
बैठ वार्तालाप करना ।)

साधु—श्रीकान्तजी ! परमेश्वरकी अनन्त कृपासे हमारे सारे दुःख मिट गये । अब हमारा कर्त्तव्य है कि घर चलकर अपनी भूलोंका प्रायश्चित करें अर्थात् भगवान्के चरणोंमें अपना शेष जीवन समर्पित करें ।

जो बदा निज भाग्यमें था मिल गया अब हाथमें ।
चलके कर पूजा सदा, ईशकी सब साथमें ॥

श्रीका०—पिताजी ! आपकी निस्स्वार्थ हृदय-कामना भला किसे अच्छी न लगेगी ? वास्तवमें जो मनुष्य बारबार सत्य मार्ग प्राप्त होनेपर कुमार्ग पर ही चलना सुख समझता है । उससे बढ़कर अज्ञानी और अभागा आदमी कौन हो सकता है ? —

"इस जगमें तो आयके कर लेने दो काम ।
देनेको टुकड़ा भला लेनेको हरिनाम ॥

(गाना)

साधु—बेटा ! तुम जैसा योग्य दामाद पाकर मेरा हृदय संसारकी समस्त वासनाओंसे विरक्त हो गया । तुम्हारे सद्व्यवहारसे

आगे मेरा गात्र पूर्ण-हृदय नीचा हो गया। बेटा! तुमने परदेशमें आशासे अधिक कार्य साधन किया। वज्र तुल्य कष्टोंसे मुझे बचा लिया।

द्रव्य जन परदेशमें तो काम आता पासका।
डूबतेको है सहारा, एक तिनका घासका॥

श्रीकान्त—पिताजी! मैंने तो कुछ भी सेवा नहीं की। यह तो अपना कर्त्तव्य है किन्तु संसारका विचित्र माया जाल देखकर प्रकृतिका चक्र देखकर आश्चर्य करना पड़ता है।

माया-रूपी जालमें पक्षी फंसे अनेक।
जपे नाम भगवान्‌का, मोक्ष मार्ग है एक॥

साधु—अच्छा कोई चिन्ता न करो। उठो घर चलनेकी तैयारी करो (नेपथ्यकी ओर देखकर) देखो, सामनेसे कलावती की माता आ रही है।

(श्रीकान्तका नेपथ्यकी ओर देखना। लीलावतीका प्रवेश। लीलावतीका साधुके चरणोंपर माथा टेकना)

लीला०—स्वामीके चरणोंमें दासीका प्रणाम स्वीकार हो।

साधु—सुखी रहो आनन्द करो।

श्रीकान्त—(प्रणाम करके) माताजीके चरणोंमें सेवकका साष्टांग अभिवादन।

लीला०—बेटा! सुखी रहो, सदा फूलो फलो। कहो बेटा! परदेशमें सुखसे तो रहे?

श्रीकान्त—माता जी ! सुख दुःख तो केवल आत्माको सन्तोष करनेका साधन है किन्तु पूर्वजन्मका कमाया हुआ पुन्य पाप इस सुख दुःखका कारण है ।

लीला०—बेटा ! मैं इतना गूढ़ अर्थ नहीं समझ सकती। कहो क्या बात है ?

श्रीकान्त—एक राज्यमें भ्रम वश हमलोग अपराधी बनाकर बन्दी बना दिये गये। फिर न जाने क्यों बिना प्रमाण या अनुसन्धानके दण्ड मुक्त कर दिये गये। इतनाही नहीं बल्कि इस नावमें लदा हुआ सारा धन उसी राजाका दिया हुआ है —

बन्दी हुये, भूखे रहे, छोड़े गये सम्पति मिली ।
पूजे गये हम प्रेमसे चिन्ता मिटी इज्जत मिली ॥

लीला०—बेटा ! यह सब कौतुक परमेश्वरकी रचना जान पड़ती है —

यह लीला भगवान्‌की, अधिक गूढ़ गम्भीर ।
पहिले दुःख दिखायके, हरी तुरत सब पीर ॥

साधु—देखो, सामनेसे कलावती भी शीघ्रतासे आ रही है ।

(कलावतीका प्रवेश ।)

कला०—पिताजीके चरणोंमें मेरा प्रणाम् ।

साधु—पुत्री ! तेरा सौभाग्य अचल रहे ।

लीला०—बेटी ! तू कहां चली थी ? क्या ठाकुरजीकी पूजा कर चुकी ?

कला०—माताजी ! ठाकुरजीकी पूजा यहांसे लौटकर कर लूंगी

(शब्द होना—सबका चौंकना। आकाशवाणी होना।
सबका आश्चर्यसे सुनना।)

"आकाशवाणी"

कलावती! तू अपने पिता और पतिके प्रेममें पूजन बन्द करके चली आई है। तूने यह बड़ा भारी अनर्थ किया है। इसका दण्ड यही है कि तेरे पिता और पतिका कमाया हुआ सारा धन नदीमें डूब जायगा।

(आकाशवाणीका बन्द होना। शब्दके साथ नावका यकायक नदीमें डूब जाना। सबका पश्चाताप करना।)

साधु—हा बेटी! तूने प्रेमवश यह क्या अनर्थ कर डाला? अनेक प्रकारके कष्टोंसे प्राप्त किया हुआ धन नष्ट कर डाला।

लीला अलख जानी नहीं उलटा हुआ क्या ज्ञान था?
क्या मिलेगा फल अभी मिट गया यह ध्यान था?

कला०—पिताजी! आप इतना दुःख न करें। मेरा अपराध क्षमा करें।

भगवान्‌की दृढ भक्तिका सदा भारी अभिमान था।
पद पद्म जोके भ्रमर अलमस्त मेरा प्राण था।

साधु—तो इस समय वह अभिमान और प्रेम कहां प्रयाण कर गया?

कला०—वह प्रेम और अभिमान अब भी हृदयमें ज्यों का त्यों विद्यमान है।
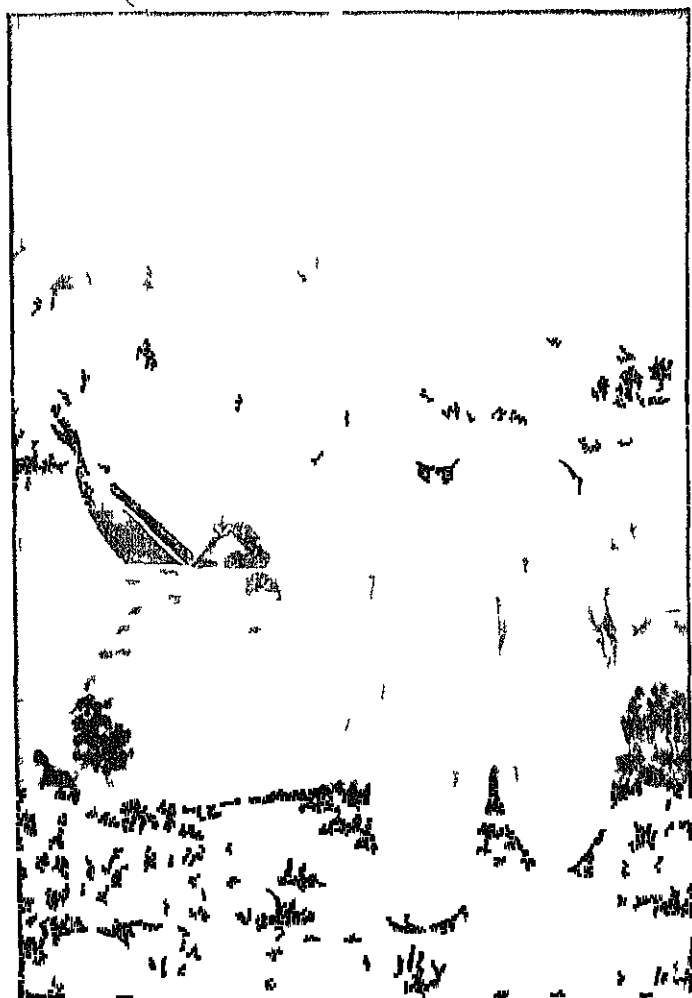
धनस लदी ु नौकाका डूब जाना साधु और गीका तका पछताना।

(पृष्ठ १)

अब भी हृदय उद्यानमें, दूना बना सम्मान है।
निशदिन रहेगा प्रेम दृढ जबतक हमारा प्राण है।

साधु—(दुःखी होकर) इसका प्रमाण ?

कला०—मैं अभी जाती हूं और श्रीठाकुरजीको लिये आती हूं। यहींपर उनका पूजन करूंगी और आपका भी दर्शन करूंगी। मैं कभी नहीं चाहती कि मेरे कारण आपको किसी प्रकारका कष्ट हो। मेरी कदापि इच्छा नहीं कि आपका अक्षय यश और अतुल द्रव्य नष्ट हो

(कलावतीका प्रस्थान)

साधु—(दुःखी होकर) हा ! क यकी इस भूलसे मेरी आशाओं पर पानी फिर गया। बना बनाया साराघर बिगड गया।

छा गई काली घटा फिर नील मणि आकाशमें।
मर गया जे मौत में तो व्यर्थ विश्वासमें॥

श्रीकान्त— पिताजी ! शोक न कीजिये। पछताने तथा रोने पीटने से कुछ भी लाभ न होगा।

करे अपराध कोई तो नतीजा और पाता है।
अनोखी चाल है प्रभुकी समझमें कुछ न आता है॥

साधु—(घबडाकर) मुझे सम्हालो। चक्कर आता है।

(साधुका मूर्छित होना। श्रीकान्तका सम्हालना—लीलावतीका घबडाकर देखना। टेबला पर्दा का गिरना)

पञ्चम दृश्य ।

प्रहसन ।

(भाग शशिधरका प्रवेश)

लम्पट पडित सौभागच द और उसके दोनो धूत चेलोंके कारण मेरी नाकमें दम है । अच्छा हुआ जो मुझे यह अचानक यह पता लग गया नहीं तो मेरी मान मर्यादा धूलमे मिल जाती ।

एक तो बगुला भक्त कथा वाचक बनना दूसरे बोला सियावर रामच द्रकी जय कहना तीसरे नकली साधुके भेषमें ज्योतिषी बनना यह दुष्टता नहीं तो और क्या है ?

कौआ कोयलमें मिले करे काव पर काव ।
भेद खुले जब दुष्ट का पावे ठौर न ठाव ॥

अच्छा ! सामनेसे धनू विद्यार्थी आ रहा है। मेरी इच्छा है कि एक स्वाग रचकर इ। सबको छकाऊ और अपना बदला चुकाऊ । अच्छा सम्हलकर वार्तालाप करना चाहिये ।

(धनू का प्रवेश । शशिधरका मौन होजाना धनू का बार बार पुकारना ।)

धनू—पडितजी ! नमस्कार (कई बार नमस्कार करता है ।)

शशि०—(कुछ देरके पश्चात) कौन ? बेटा धनू !

धन्नू—पंडितजी! उदास क्यों हैं?

शशि०—बेटा! कुछ न पूछो। मेरी बेटी दामिनी खाटीसे गिर पड़ी है। उसका एक पांव टूट गया है। अभी उसका विवाह भी नहीं हुआ। अब मैं उसे बैठे बैठे कब तक खिलाऊंगा?

धन्नू—पंडितजी! अगर आप बुरा न माने तो एक उपाय मैं बता सकता हूं।

शशि०—बेटा! सच्ची बातमें क्या बुरा मानना है?

धन्नू- बस तो उत्तम उपाय यही है कि यदि आप दामिनीका विवाह मेरे साथ कर देना चाहें तो मैं भी तैयार हूं

शशि०—यह तो बड़ी खुशीकी बात है। तुम तैयार हो तो मैं भी तैयार हूं किन्तु उस पीठमें आदे लादे तीर्थ यात्रा भी करानी होगी।

धन्नू—धन्नूको इसकी तनिक भी चिन्ता नहीं। एक तीर्थ क्या दस तीर्थ करा सकता हूं। सारा पुन्य तो मुझकोही मिलेगा।

शशि०—अच्छा, तो आज परीक्षाका दिन नियत किया गया है। यदि परीक्षामें उत्तीर्ण होगे तो विवाह कर दिया जायगा।

धन्नू—किंतु इसका पता धुरन्धर या गुरुजीको न लगे, नहीं तो वे कण्टक हो जायगे।

शशि०—नहीं नहीं तुम निश्चिन्त रहो किंतु देखो ठीक आठ बजे आ जाना।

धन्नू—बहुत अच्छा।

(धन्नू का प्रस्थान।)

शशि०—(नेपथ्यकी ओर देखकर) सामनेसे धुरन्धरभी आ रहा है, इसे भी बातोंमे फसाना चाहिये ।

(धुरन्धरका प्रवेश)

धुर०—नमस्कार ! नमस्कार पंडितजी !!

शशि०—नमस्कार अच्छा !

धुर०—पण्डितजी ! आज आपके चेहरेपर उदासी क्यों छाई है ?

शशि०—बेटा ! यह अपना पुराना बदला चुकाने आई है । यामिनीका पांव तोडने और उसका विवाह बन्द कराने आई है

(बनावटी रोनेका नाट्य करना ।)

धुर०—पण्डितजी ! आप दुःख न करें। मैं भी विवाह न होनेके कारण नदीमें डूबने जा रहा था, यदि आप मेरा विवाह स्वीकार करें तो मैं अपना विचार स्थगित कर सकता हूं।

शशि०—बेटा ! इस प्रकार प्राण देना उचित नहीं। पहिले अपना विचार स्थगित करो और सन्ध्या समय साढे आठ बजे मेरे घरमें आकर अपना विवाह निश्चित करो। मगर यह भेद धन्नू और सौभागचन्दको न बताना ।

धुर०—जो आज्ञा ।

(धुरन्धरका प्रस्थान ।)

शशि०—(नेपथ्यकी ओर देखकर) अच्छा धीरे धीरे पंडित सौभागचन्द भी आ रहे हैं। अब इनका भेद पहिले छिपकर जानना उचित है ।

(पंडित सौभागचन्दका प्रवेश)

सौभा०—बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय ! जो है सो । धन्नू और धुरन्धर दोनों दुष्ट चलाने मुझे बुरी तरह छकाना चाहा कि तु मैं भी वह समुद्री खारा जल हूं कि मेरे सामने किसीकी दाल गलना असम्भव है ।

अगर उन दोनोंने अपनी माताका दूध पिया है तो मैंने भी बड़े बड़े यज्ञोंकी हव्य और समुद्रका फेन चाट चाट कर शारीरिक और मानसिक शक्ति बढ़ाई है ।

जो हो, इन्हीं दोनोंके कारण दामिनीके मिलनेकी आशा भङ्ग हो गयी ।

कर्म लिखा सो टरे न टारा ।
वृथा राडने मुझको मारा ॥

बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय । जो है सो ।

(शशिधरका सम्मुख आकर)

शशि०—पंडितजी ! क्यों निराश हो रहे हो ! उस रांडका दोष नहीं है । वह तो बेचारी स्वयं मर रही है ।

सौभा०—(आश्चर्यसे) क्या मर रही है ? सो कैसे ?

शशि०—(दुखी होकर) भाई ! सीढीसे उतरते समय गिर पड़ी । तुरन्त एक पांव टूट गया ।

सौभा०—क्या पांव टूट गया ? (रोकर) हाय हाय, तो मैं अब किसकी चरण सेवा करूंगा ?

शशि०—भाई ! जब तुम्हारा ऐसा सच्चा प्रेम है तो आज आकर उसकी दशा देख जाना । मेरी इच्छा है कि तुम्हारे साथ उसका विवाह भी करदूं ।

सौभा०—हा हा क्या हानि है ? क्या मुझे अस्वीकार थोडेही है

शशि०—तो आप ठीक नो बजे आ जाइयगा।

सौभा०—जो आज्ञा मैं तो साढ आठ आठही बजे तक
आसकता हू।

शशि०—नहीं, नही ठीक नौ बजे आजाइस भेट होगी।

सौभा०—अच्छा मैं नो बजे ही आऊगा। प्रणाम (स्वगत)
बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय, जो है सो।

(प्रस्थान)

शशि०—(हसकर) अब तीनोके छकानेका अच्छा अवसर मिला है। निलज्जता तो अधिक उठानी पडी किन्तु तीनोकी दुष्टता छूट जायगी। अच्छा चलू और स्वय दामिनी बनकर अपना बदला चुकाऊ।

(प्रस्थान—दूसरीओरसे धन्नू का गाते हुये प्रवेश।)

गायन।

मेरा धन्नू है नाम मं। जमाना हे देखा।
जमाना है देखा कमाना है देखा मेरा॥
मुफती मिली हे मुझको ये दुलहिन
खर्चा नही है छदाम॥ मैने०॥
उसका मैं प्यारा, मेरी वह प्यारी
जोडी हे दोना बेदाम॥ मै०॥

चलू अब श्रीमतीके सेवामें चलकर अपना सौभाग सफल बनाऊ।

(प्रस्थान—पर्देका उठना शशिधरका मकान। शशिधरका स्त्रीक भयमें घूंघट काढे उदास भावसे बैठे दिखाई पड़ना और बाहरसे धन्नूका पुकारना शशिधरका किवाड़ खोलना और धन्नूके साथ नगटात आना।)

धन्नू—प्यारी! तुम्हारे पावमें चोट सुनकर मुझे बड़ा दुख हुआ है।

शशि०—भाई! पावमें बड़ी ज़ोरसे दर्द हो रहा है। पंडितजी दवा लेने गये हैं और कह गये हैं कि धन्नू आवे तो आदर सत्कारसे बैठाना।

धन्नू—प्यारी! पंडितजीने हमारा तुम्हारा विवाह भी स्वीकार कर लिया है। अब क्यों शर्माती हो? ज़रा घूंघट तो खोलो।

शशि०—देखो मुझसे दिल्लगी न करो। मेरे पावमें दर्द है।

धन्नू—हाय हायरे! दिल्लगी और दर्द।

(बाहरसे धुरन्धरका पुकारना।)

पंडिजी! ओ पंडितजी!!

धन्नू—अरे! यह कौन यह तो धुरन्धर जान पड़ता है। प्यारी! कहीं छिपाओ।

शशि०—यहां तो कहीं भी छिपानेकी जगह नहीं है। मैं कहां छिपाऊं?

(धुर०)—पंडितजी! किवाड़ खोलो। धुरन्धर बड़ी देरसे पुकार रहा है।

धन्नू—(घबड़ाकर) अरे प्यारी! कहीं छिपाओ! नहीं तो पीठकी चमड़ी मार खाते खाते निकल जायगी।

शशि०—अच्छा मैं एक उपाय बताती हू। तुम पत्थरकी मूतिकी भांति खड़े हो जाओ और मैं तुम्हारे मु हमें काला लगा दू। जब कोई पूछेगा तो मैं कह दू गी कि यह आश्चर्य जनक मूति दक्षिणामें मिली है।

धन्नू—आश्चर्य क्या दिखाना होगा?

शशि०—यही, कि दाहिना कान पेठनेसे जीभ लपलपाना और बाया कान पेठनेसे जीभ भीतर कर लेना।

(शब्द) अरे जल्दी खोलो पडितजी!

धन्नू—अच्छा तो, यही उपाय करो प्यारी!

(धन्ना का पत्थरकी मूतिकी भांति आकड कर और मु ह वनाकर खडा होना और शशिधरका उसके मु हमें कालख पोतकर किवाड़ खोलने जाना धर्मधरका प्रवेश)

धुर०—प्यारी! इतनी देर तक क्या कर रही थी?

शशि०—प्यारे! दर्द के मारे निद्रा आगई थी, तुम्हारी आवाजसे मैं जाग उठी।

धुर०—प्यारी! तुम्हारी सेवामें आनेसे मेरे प्राण बच गये। नहीं तो मै नदीमें डूबकर मर जाता। संयोगवश आपके पिता शशिधर पडितको मैं योग्य दामाद मिल गया और भाग्यवश मुझे तुम ऐसी सुन्दर स्त्री मिल गई (स्वगत) हे परमात्मा! इसी तरह सबका भला करना।

शशि०—(नखरेसे) वाहवा आप तो आतेही दिल्लगी करने लगे। न खाना न खिलाना न हंसना, न हंसाना।

धुर०—वाहरे तेरा खिलाना और हसाना। प्यारी ! ये क्या चीज है ? (मूर्तिके पास जाना)

शशि०—यह एक अद्भुत पत्थरकी मूर्ति है जो आदमीसे बिल्कुल मिलती जुलती है।

धुर०—इसमें क्या गुण है ?

शशि०—इसका दहिना कान ऐंठनेसे जीभ निकालेगी और बायां कान ऐंठनेसे जीभ बन्दकर लेगी।

(धुरन्धरका कान ऐंठकर परीक्षा करना। बाहर से सौभाग्यचंदका पुकारना।)

पंडित शशिधरजी ! किवाड खोलिये।

धुर०—(घबडाकर) हैं ये तो मेरे गुरुजी जान पडते है। प्यारी मुझे छिपाओ। मेरा प्राण बचाओ।

शशि०—मैं कहां छिपाऊं ? मेरे घरमें तो जगह नहीं है।

धुर०—नहीं प्यारी ! मै तेरे हाथ जोडता हू पांव पडता हू।

शशि०—अच्छा मै एक उपाय [illegible]। मेरे घरमें जैसी यह मूर्ति [illegible] है उसी प्रकार तुम भी बने [illegible]।

धुर०—[illegible] नहीं [illegible]।

शशि०—अच्छा [illegible] मत [illegible] किन्तु जिस समय मैं एक कहूं तुरन्त समीप [illegible]। फिर वो कहनेपर हाथ [illegible] लेना।

(शब्द) पंडित शशिधरजी ?

धुर०—अच्छा, जो आज्ञा [illegible] करूंगा। जल्दी करो।

(धर धरवा प्रथम मूतिकी भाति अकन्‍ कर और मुह बनाकर
तथा हाथ फलाकर खडा होना। शशिधरका किवाड
खोलना। सौभाग्यचदका प्रवश।)

सौभा०—प्यारी! तुम इतनी देरतक क्या कर रही थी?

शशि०—मै इन मूतियोंको कपडा पहिना रही थी।

(मतियाकी सूरत दखकर सौभाग्यचद्रका डरना)

शशि०—डरते क्यो हो? य तो पत्थरकी मूर्तिया हैं।

सौभा०—तो क्या पत्थरकी मूर्तिया हैं।

शशि०—जी हा पत्थरकी मूर्तिया। देखिये, भारतकी कला कौशल।

सौभा०—(आश्चयसे) इनमें और मनुष्यमें तो कोई फर्क नहीं।

(दाना मतियाकी सौभाग्यचदका नकल करना)

शशि०—पडितजी! इन मूतियोंमें बडी विचित्रता है।

सौभा०—क्या विचित्रता है?

शशि०—यही कि (प्रथममूर्ति) इस मूतिका दहिना कान ऐठ
नेसे जीभ निकालती है और बाया कान ऐठनेसे जीभ
सिकोडती है और इस मूर्तिमें यह विचित्रता है कि
"एक" कहने पर थप्पड मारता है और "दो" कहनेसे
हाथ सिकोड लेती है।

(सोभाग्यचदरा दोना मतियोकी परीक्षा करना और आश्चय
करना। पहिली मतिक जीभ निकालनेके वक्त बोलो
सियावर रामचन्द्रकी जय! जो है सो कहना। दूसरी
मर्तिकी परीक्षाके समय थप्पड मारनके समय
बोला सियावर रामचन्द्रकी जय
जो है सो कहना।)

सौभा०—अच्छा प्यारी! यह तो दोनो मूर्तियां हमारी तुम्हारी रक्षक हैं। अब हमारे तुम्हारे प्रेममें किसी प्रकारकी कमी न होगी।

शशि०—कहीं हमारा तुम्हारा प्रेम देखकर इन मूर्तियोंमें भी प्रेम न पदा हो जाय।

सौभा०—नहीं, नहीं ये मूर्तियां धन्नू और धुरन्धर थोड़े ही हैं।

शशि०—शायद धन्नू और धुरन्धरही हो जाय।

सौभा०—अच्छा, जब हो जायगी तब देखा जायगा। मगर विघ्न कारक तुम्हारो पिता शशिधर तो न बनेंगी?

शशि०—(भय प्रकटकर) तो विघ्नकारक शशिधर पण्डित अब भी मौजूद हैं।

१ मूर्ति—और धन्नू भी मौजूद है।

२ मूर्ति—तो धुरन्धर भी तैयार है।

(सौभाग्यचन्द्रका आश्चर्य करना और डरना। शशिधरका सौभाग्यचन्द्रके कान पकड़ना।)

सौभा०—बोलो सियावर रामचन्द्रकी जय! जो है सो।

धन्नू और धुर०—पञ्चमो अध्याय समाप्तम।

(कान पकड़े हुये सौभाग्यचन्द्रका जाना। पीछे पीछे धन्नू और धुरन्धरका प्रस्थान। पर्दे का उठना।)

षष्ठ दृश्य

स्थान—नदीका किनारा
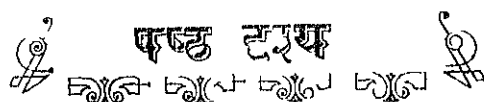
(अहीरोंका एकदल लालकाख जरी झांझा डफ आदि बजाता गाता नाचता और कूदता हुआ आता है। एक थाल पर ठाकुरजीकी मूर्ति रक्खे हुए छाता लगाये कुछलोग पीछे पीछे आते हैं।)

गायन।

जय सत्यनारायण दाता! हमरे त्राता नाथ हमारे।
तुमही जगके कर्ता धर्ता, तुमही हो रखवारे ॥
हमरी नइया पार लगाओ, चक्र सुदर्शन धारे।
बन्दे बडे जो राक्षस दल ये तुरतहिं मारसंहारे।
जय हो तुमरी घट घटवासी पाडे तीन जन चारे ॥

(एक राजाका अपने सेनापतिके साथ प्रवेश।]

राजा—सेनापतिजी! ये लोग क्यों इतना उछल कूद रहे हैं?
सेना०—जान पड़ता है कि, कोई उत्सव मना रहे हैं।
राजा—अच्छा इन लोगोंसे पूछ कर ठीक ठीक पता लगाओ।
सेना०—जो आज्ञा।

[सेनापतिका अहीरोंके पास जाना। अहीरोंकादूसरा भजन गानेका परामर्श करना।]

१ अहीर—मद्दू काका पहिले अपना भजन उठावे।

२ अहीर—नहीं नहीं लल्लू दद्दा कोई अच्छा भजन सुनावें। इन्हे बहुत अच्छे अच्छे भजन याद हैं।

३ अहीर—हां हां पारसाल दद्दाने एक ऐसा अच्छा भजन गाया था कि प्रेमके मारे मेरे मामाको मूर्छा आ गई थी।

४ अहीर—अच्छा, पुरानी बातें बन्द करो और भजन गाना शुरू करो।

[सबका गानेके लिये स्वर मिलाना। सेनापतिका रोकना।]

सेना०—ऐ गाने वालो! ठहरो। पहिले अपना भेद बताओ। तुम लोग किसलिये इतना गाते बजाते और उछलकूद मचाते हो?

(सबका स्वर बन्दकर आश्चर्यसे सुनना।)

१ अहीर—सिपाहीजी! हमलोगोंने भगवान् सत्यनारायण महाराजकी कथा सुननेका प्रण किया था। आज वह कथा समाप्त हुई है। इसलिये गाते बजाते और उत्सव मनाते हुए गङ्गा किनारे जा रहे हैं। फिर वहांसे घर चले जायगे।

२ अहीर—अरे लल्लु दद्दा! इन्हें भी भगवान्‌का प्रसाद देना चाहिये।

सेना०—मैं अपने महाराजकी आज्ञाके बिना कुछ भी न लूंगा।

अहीर—तो क्या ये आपके महाराजा हैं?

सेना०—हां वे ही हमारे महाराज हैं।

१ अहीर—तब तो महाराजको भी भगवान्का प्रसाद देना चाहिये।

सब—हां हां अवश्य देना चाहिये।

(एक अहीरका प्रसाद लेकर राजाके पास जाना राजाका आनादर करना)

राजा—इससे क्या लाभ? यह क्या वस्तु है?

१ अहीर—महाराज! यह भगवान्का प्रसाद है। इससे हजारों लाभ हैं। हम गवार आदमी क्या बतावें?

राजा—हटाओ प्रसादको मुझे प्रसाद खानेकी क्या आवश्यकता! (सेनापतिसे) सेनापतिजी! इन सबको यहांसे हटाओ।

सेना०—चलो चलो हटो! तुम लोग, अपना जलूस यहांसे आगे बढ़ाओ।

अहीरगण—जो आज्ञा महाराज!

भजन।

मनुआ! भज ले श्रीभगवान्को।

लोभ मोहकी बनी ये काया धरले पूरा ध्यानको॥ म०॥

जो चाहे भी जपे नेमसे पावे पद निर्वानका॥ म०॥

[सबका भजन गाते हुये प्रस्थान।]

राजा—सेनापतिजी! आज मुझे पता लगा कि हमारे नगरमें ऐसे ढोंगी लोग अपना जाल फैलानेकी चिन्तामें निमग्न रहते हैं। देखा इन लोगोंका ढोंग?

सेना०—महाराज! ये लोग अपने धर्ममें बड़े पक्के हैं इन्हें अपने भाव भजनपर बड़ा विश्वास है

[एक सिपाहीका घबराते हुए प्रवेश और राजकुमारकी अचानक मृत्युका खबर सुनाना।]

सिपाही—महाराज! महाराज!! महलमें अचानक राजकुमारकी मृत्यु हो गई है। चलिये! शीघ्र चलिये। महल भरमें हाहाकार मचा हुआ है।

राजा—(आश्चर्यसे) क्या मेरे राजकुमारकी मृत्यु?

सिपाही—जी हां

राजा—(घबड़ाकर) हरे परमात्मा! यह क्या अनर्थ! मैं तो राजकुमारको अभी महलमें सकुशल खेलता हुआ छोड़कर आया हूं। (सेनापतिसे) सेनापतिजी! बताओ बताओ। यह क्या रहस्य है? मुझे समझाओ और मेरे प्यारे पुत्रको मुझसे शीघ्र मिलाओ।

[शब्द होना—शब्दके साथ प्रकाश फैलना और आकाशवाणी होना। राजा तथा सेनापतिका आश्चर्यसे सुनना]

"आकाशवाणी"

राजन्! तुमने सत्यनारायण भगवान्के प्रसादका और उनके ग्वालोंका अपमान किया है। इसीसे तुम्हे यह भीषण दुख मिला है।

राजा—(गिड़गिड़ाकर) सेनापतिजी! जाओ ग्वालोंसे मेरा दुख सुनाओ और शीघ्र उनको प्रार्थनापूर्वक लौटा लाओ।

सेना०—जो आज्ञा।

(सेनापतिका प्रस्थान। राजाका दु ख प्रकट करना।)

साधु—(समीप आकर) महाराज! धैर्य धर। इस प्रकार घबड़ानेसे रनवासकी बुरी दशा होगी।

राजा—(दु खी होकर) मेरे हितू! तुम कौन हो? बोलो भाई! बोलो। क्या तुमने मेरा पुत्र देखा है?

(राजाका पछाड़ खाकर गिरना। अहीरोंका गाते हुए प्रवेश। साधक दौड़कर गाना बजाना बंद कराना।)

साधु (गायक दलसे) ठहरो भाई! ठहरो। गाना बजाना बन्द करो। देखो पुत्र वियोगसे श्रीमान् कैसे दु खित हो रहे हैं।

(गाना बजाना बदकर सबका आश्चर्यसे देखना)

सेना० (हाथ जोड़कर) अब आपलोग कृपाकरके भगवान्का प्रसाद और चरणोदक महाराजको शीघ्र प्रदान करें और उनकी भूलको क्षमा करें (राजासे) उठिये महाराज! उठिये। अब आप पहिले प्रसाद ग्रहण करें और राज महलकी ओर चलें।

(अहीरोंका प्रसाद देना। राजाका प्रेम पूर्वक प्रसाद लेकर साष्टांग दण्डवत करना और क्षमा मांगना)

धन्य है! इस महा प्रसादको धन्य है। धन्य है प्रसाद प्रणाम और धन्य हैं परमात्मा अनन्त विजेता।

(पुनः आकाश वाणी होना। सबका आश्चर्य करना।)

आकाशवाणी

राजन्! मत घबड़ाओ। तुम्हारा पुत्र जीवित होगया। जाओ और सुखसे समय बिताओ।

(सबका उत्साह पूर्वक जय बोलना बोलो सत्यनारायण भगवान्‌की जय। राजा और सेनापतिका प्रणाम कर शीघ्रतासे जाना और अहीरोंका प्रेममें मग्न होकर भजन गाना।)

गायन।

गाओ! गाओ! खुशीसे प्रभु हरीका गान।
गान गाओ, जय मनाओ सौख्य रंग का हो आमान।
करो आरती सभी भारती हने देशसे दुःख कृपाण॥

(गाते हुये सबका प्रस्थान।)

साधु—(स्वगत) हे भगवान्! इसी प्रकार मेरा भी कष्ट निवारण करिये। मैंने जो अपराध किये हों उन्हें क्षमा करिये।

श्रीका० (समीप आकर) यह कैसा रहस्य था?

साधु यह भी परमात्माका एक कौतुक है। जो अविश्वासियोंके हृदयका मल साफकर स्वच्छ आइनाकी तरह उज्वल करता है।

लीला० (समीप आकर) प्राणपति! देखिये कलावती सास जैसे ठाकुरजीका लिये आ रही है।

कलावतीका ठाकुरजी लिये प्रवेश। सामने
रखकर सबका पूजा करना।

आरती

जय जय सत्यनारायण स्वामी! अन्तर्यामी॥
कष्ट निवारो हे प्रभु मेरे।
दीन दुखी हम हुये घनेरे।
जय प्रभु पावन! तुमहि नमामी। जय०॥
दीननके आधार आप हैं।
जनम जनमके कटत पाप हैं।
अगम नियमके हो अनुगामी॥ जय०॥

[शब्दहोना। जलका हिलना। नावका धीरे धीरे ऊपर आना।
सबका जय बोलना। जलके मध्यसे भगवानका प्रकट
होना आशीष देना। टबला)

ड्राप

महाराणा प्रतापसिंह

रंग बिरंगे ७ चित्रोंसे सुशोभित

हिंदूकुल सूर्य महापराक्रमशाली वीर शिरोमणि स्वतंत्रताके मंत्रके उपासक, प्रातःस्मरणीय महाराणा प्रतापसिंहको कौन नहीं जानता? इस ग्रन्थमें उन्हीं महाराणा प्रतापसिंहके शौर्य वीर्यका पूरा वृत्तान्त लिखा गया है। यदि आपको भाई भाईकी लड़ाईका हाल देखना हो, राजपूत कुल पुरोहितका राणाकी रक्षाके लिये प्राण विसर्जन करनेका रोमांचकारी हाल पढ़ना हो, राणा प्रतापसिंहका वन और पहाड़ोंमें रहकर स्वदेश रक्षा करनेका हाल जानना हो तो इस ग्रन्थको मगाकर पढ़िये। यह ग्रन्थ प्रत्येक देशाभिमानीको पढ़ना चाहिये। मूल्य १) रेशमी जिल्द १॥)

जासूसी उपन्यास सीरीज

विचित्र जाल।

९ रंग बिरंगे चित्रोंसे सुशोभित

यह एक घटना पूर्ण जासूसी उपन्यास है। इसमें जालसाजोंकी जालसाजी धूर्तोंकी धूर्तता जासूसोंकी चालाकी बड़ी खूबीके साथ दिखाई गई है। इसे पढ़ कभी आप भयसे कांपने लग जायगे, कभी खिल खिला कर हंस पड़ेगे कभी रोने लग जायगे और कभी ताज्जुबमें पड़ जावेंगे। इस पुस्तकको पढ़कर कोई भी मनुष्य जालसाजोंके चंगुलमें नहीं फंस सकता। पुस्तककी भाषा रोचक और किस्सा बड़ा दिलचस्प है एक बार हाथमें लेकर छोड़नेको मन नहीं करेगा। मूल्य ॥)

इस पुस्तकको यदि राष्ट्रीय पुष्पवाटिका कहा जाय तो कुछ अनुचित न होगा। जिस तरह पुष्पवाटिकाके सुन्दर फूलोंकी सुगन्धी मनुष्यका चित्त हरा भरा प्रसन्न और शान्त बना देती है उसी तरह इस राष्ट्रीय पुष्प वाटिकाके मनोहर फूलोंकी जैसे मातृ वन्दना नमो हिंदुस्थान हिंदोस्तां हमारा चलाओ चरखा वन्देमातरम् जय यात्रा आदिकी अपूर्व सुगन्धी भी भारतवासियोंके मुरझाए हुए दिलोंको हरा भरा और प्रसन्न बना देती है। इसमेंके राष्ट्रीय गायन पढ़कर मनुष्यके हृदयमें देशभक्ति जागृत होती है और स्वतंत्रताका

सञ्चार होता है इस पुस्तकका प्रत्येक पद मुर्दा दिलोंमें जान डालनेवाला है यह पुस्तक प्रत्येक भारतवासीको संग्रह करनी चाहिये। मूल्य भी बहुत ही कम रखा गया है। यानी एक एक सौ पन्नाके दो भागोंका केवल १) रेशमी जिल्द १॥)

नाट्य ग्रन्थमालाका प्रथम ग्रन्थ

यह नाटक पौराणिक राजनीतिक धार्मिक और समाजिक घटनाओंसे भरा हुआ है। जिस समय रंगमञ्च पर अभिनीत होता है उस समय जनता चित्रवत हो जाती है। इसकी प्रशंसा कहां तक करें इतनाही लिखना यथेष्ट होगा कि कलकत्तेकी सुप्रसिद्ध हिन्दी नाट्य समिति पांच पांच हजार जनताकी उपस्थितिमें इसे दो बार अभिनीत कर ख्याति प्राप्त कर चुकी है तथा इसकी प्रशंसा सभी विद्वानोंने मुक्त कण्ठसे की है। इसके लेखक हैं नाट्य प्रेमियोंके सुपरिचित पाप परिणाम सती चिन्ता कृष्ण सुदामा आदिके लेखक नाट्यकलामें निपुण

बाबू जमुनादासजी मेहरा। लेखकने इसकी घटनाओंको सजानेमें चतुर जौहरीका काम किया है जिसे देखकर वाह वाह करनी पड़ती है। इस नाटककी बहुतही थोड़ी प्रतियां बची हैं शीघ्र मंगाइये नहीं तो दूसरे संस्करणकी बाट जोहनी पड़ेगी मूल्य १।) रंगीन १॥) रेशमी जिल्द १॥।)
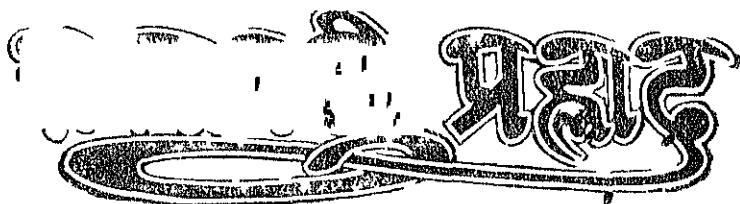
नाट्य ग्रन्थमालाका दूसरा ग्रन्थ
यह नाटक सत्याग्रहका जीता जागता चित्र है। भक्त प्रहलादने किस प्रकार सत्याग्रह द्वारा दमन नीतिपर विजय प्राप्त की थी यह बात इस नाटकके पढ़नेसे भली भांति विदित हो जायगी। यह नाटक कलकत्तेमें बहु सख्यक जनताके सामने दो बार सफलता पूर्वक खेला जा चुका है। इसकी सफलतापर लेखक को १००) पुरस्कार भी मिला है।
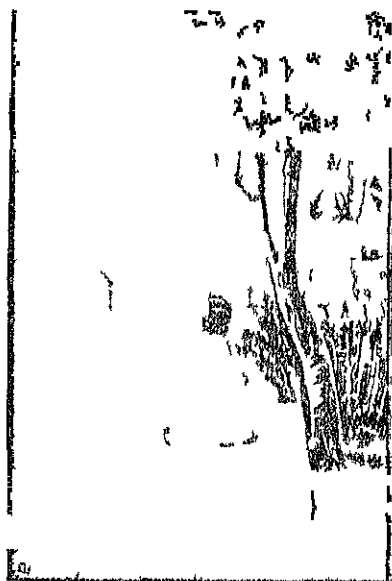
इस नाटककी समाचार पत्रोंने मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की है और इसके मात्र भाषाकी सुन्दर रतलाते हुए इसको पढ़ने और अभिनीत करनेके लिये जनतासे अनुरोध किया है। वास्तवमें यह नाटक बड़ाही अनूठा है इस नाटकमें बहुरंगे तथा एक रङ्गे ४ चित्र भी दिये गये हैं। नाटक प्रेमियोंको अवश्य पढ़ना चाहिये मूल्य १) रेशमी जिल्द १॥)

नाट्य ग्रन्थमाला — तीसरा ग्रन्थ

५ बहुरंगे तथा एक रंगे चित्रोंसे सुशोभित ।

इस नाटकमें सम्राट परीक्षितके जन्म होनेका कारण और जन्म होनेके समयकी घटना बड़ी ही आकर्षक और हृदय विदारक दृश्य कलियुग द्वारा धर्म और पृथ्वीका सताना, राजा परीक्षितका उनकी सहायता कर कलियुगके साथ घोर युद्ध कर कलियुगका हार मानना, राजाकी आज्ञासे स्वर्ण जुआ तथा वेश्याके गृहमें निवास करना । कलियुगके प्रभावसे राजाकी बुद्धि पलटना, शमीक ऋषिके गलेमें मरा सर्प डालना, ऋषिका क्रोधित होना, राजाको शाप देना तक्षक सर्प और धन्वन्तरका अपूर्व संवाद तक्षकका कीड़ा बनकर परीक्षितका काटना, राजा जन्मेजयका सर्प यज्ञ करना, इन्द्र द्वारा तक्षककी रक्षा होना आदि बातें बड़ी खूबीके साथ लिखी गई हैं । इसके साथ कामकन्दलाजीका प्रहसन भी दिया गया है जिसको देखते देखते दर्शक लोटपोट हो जाते हैं । मूल्य १।) रेशमी जिल्द १।।।)
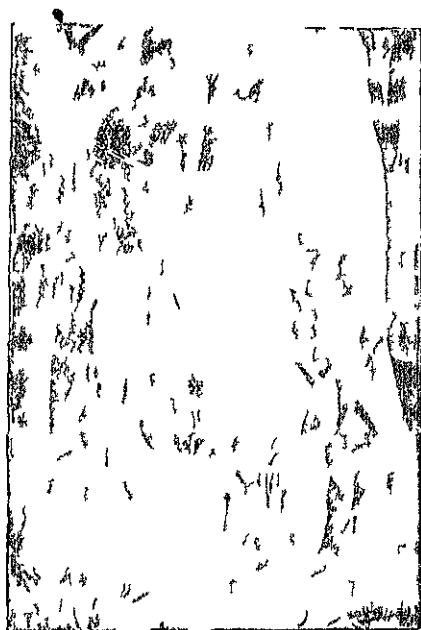
पञ्जाबका भीषण हत्याकाण्ड

अथवा।

पंजाबके मार्शल ला-कालका पूरा इतिहास

इस ग्रन्थमें प्रजापक्षके कांग्रेस कमीशन तथा सरकारी पक्षकी हण्टर कमिटीकी बड़ी खोजके साथ लिखी हुई पूरी रिपोर्टों का हाल तथा अनेक रोमाञ्च कारिणी गवाहियां दी गई हैं। यह ब्रिटिश जातिकी अन्याय पूर्ण नीतिका एक जीता जागता सच्चा इतिहास है। यदि आप अपने पंजाबी भाई बहिनों और माताओंकी दर्द भरी कहानी अदूरदर्शी जेनरल डायरके हुक्मसे हजारों भले आदमियोंका सरे आम बेत लगाये जाने पेटके बल रेंगवाया जाना और अनाथ रमणियोंका अपमान किया जाना आदि रोमाञ्चकारिणी घटनायें इसमें बड़ी खूबीके साथ सरल हिन्दी भाषामें जिस अनजानसे अनजान आदमी भी आसानीसे पढ़ ले लिखी गई है। अवश्य मङ्गाकर पढ़िये दाम भी बहुत कम रखा गया है। अर्थात् ५०० पृष्ठ तथा ५१ चित्रों सहित बड़े पोथेका केवल १॥।) रंगीन जिल्द २) रेशमी जिल्द २॥)

मोती महल

यदि आपको ऐय्यारी और तिलिस्मी उपन्यासोंके पढ़नेका ज्यादह शौक हो तो और कहीं न भटककर हमारे यहांसे यह मोती महल नामक उपन्यास मंगाकर जरूर पढ़िये इसमें लिखी ऐय्यारोंकी ऐय्यारियोंका हाल पढ़कर आप ताज्जुबमें पड़ जायंगे तथा तिलिस्मका हाल जानकर चकित हो जावेंगे। दाम ६ भागका ३॥।) रेशमी जिल्द ४॥)

(लेखक महात्मा गान्धी।)

वर्तमान समयमें यह पुस्तक भारतवासियोंके लिये दूसरी श्रीमद् भगवत गीता है। जिस तरह गीतामें भगवान श्रीकृष्णने अपने प्रिय सखा प्रेम पात्र किन्तु माया मोहसे घिरे हुए भयभीत तथा पथ भ्रष्ट सशङ्कित कुलीन वीर अर्जुनको कर्मयोगका उपदेश दे उनके सारे सन्देहोंको दूर करते हुए उन्हें स्वराज्य प्राप्तिका सच्चा मार्ग बताया था उसी तरह इस पुस्तकमें भी प्रत्यक्ष रूपमें भारतके वर्तमान कृष्ण महात्मा गान्धीने स्वराज्याभिलाषी किन्तु भयभीत तथा सशङ्कित भारतवासियोंके सारे सन्देहोंको दूर करते हुए उन्हें असहयोग तथा सत्याग्रह द्वारा आत्मशुद्धि कर स्वराज्य प्राप्तिका सच्चा मार्ग बताया है। पुस्तक पढ़ने योग्य है मूल्य ॥) रेशमी जिल्द १)

प्रेमका फल

यह उपन्यास उर्दूकी प्यारी बोल चालमें लिखा गया है और अपने ढंगका एक ही है। इसमें शुद्ध प्रेम और उसका परिणाम ऐसी खूबीके साथ दर्शाया गया है कि एक बार हाथमें उठानेसे बिना समाप्त किये दिल नहीं मानता। इतना दिलचस्प होनेपर भी यह उपन्यास शिक्षाका भण्डार है। हम जोर देकर कह सकते हैं कि ऐसा बढ़िया तथा दिलचस्प उपन्यास मिलना कठिन है। दाम केवल ॥=)